साहित्य रत्न

हिंदी मासिक पत्रिका

अनुक्रमणिका
मई 2023

साहित्य रत्न वर्ष 1
अंक 1
मई - 2023

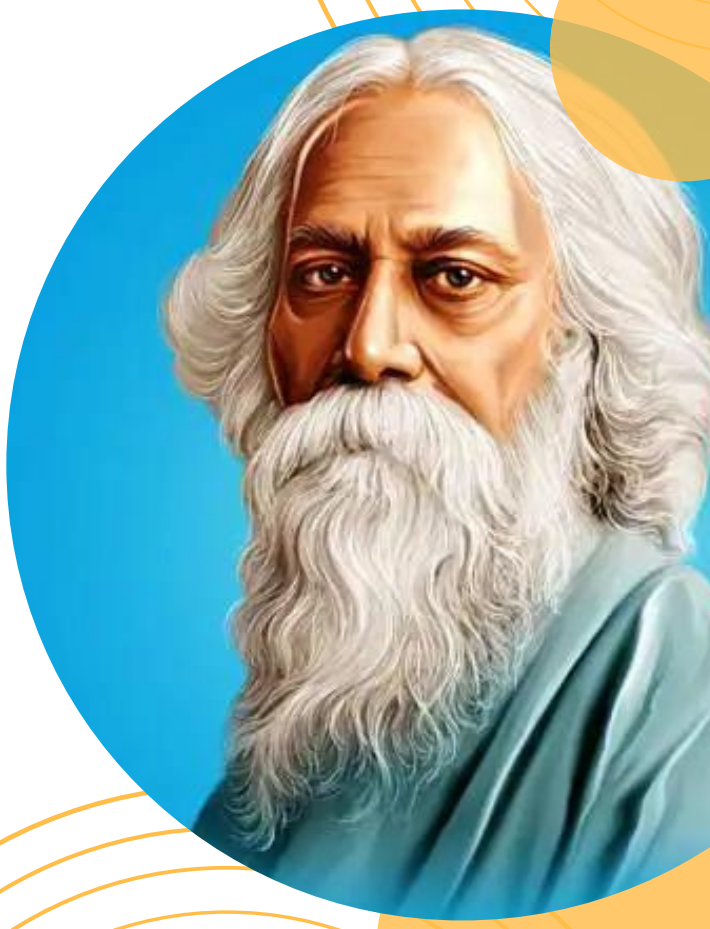

कविता और साहित्य को ऐसे लोगों तक ऑनलाइन उपलब्ध कराना है, जो इससे गहरा लगाव रखते हैं और इससे समृद्ध होना चाहते हैं।.

यहाँ हिंदी–काव्य–परंपरा व अन्य साहित्यिक विधाओं को विभिन्न विभागों में वर्गीकृत किया गया है। इसमें छंद के भिन्न–भिन्न अनुशासनों और कालक्रमानुसार कविता को श्रेणीबद्ध किया गया है।

प्रकाशक :	साहित्य रत्न
प्रधान संपादक :	सुरजीत सिंह
संपादक (अवैतनिक) :	रामाअवतार बैरवा
उपसंपादक :	डॉ. कुशल पाल सिंह
दूरभाष संख्या :	+91-9997111311
ई-मेल :	editor@sahityaratan.com
वेबसाइट :	www.sahityaratan.com
पता :	गाँव-नगला नत्थू, पोस्ट-नौगाँव तहसील-सादाबाद, जिला-हाथरस उत्तर प्रदेश -281306

अनुक्रमणिका

1- सम्पादक की कलम से 'साहित्य रत्न' – रामअवतार बैरवा
2- कहानी: बंद खिड़की खुल गई – अंजू शर्मा
3- कहानी: गुड्डी का सिलेबस – मनीष कुमार सिंह
4- कहानी: प्रेम की जीत – श्यामल बिहारी महतो
5- कहानी: बेफिक्र – डॉ मृत्युंजय कोईरी
6- कहानी: बूँद बूँद ज़हर पिया, पिया के नाम – देवी नागरानी
7- लघुकथा: मासूम सवाल – कीर्ती श्रीवास्तव
8- लघुकथा: चिन्ता के कारण – नगेन्द्र फौजदार
9- गीत: बदल गया गाँव – धीरज श्रीवास्तव
10- गीत: सहारा गीत का – मयंक श्रीवास्तव
11- गीत: प्रश्न करने दिन खड़ा था – सुरजीत मान जलईया सिंह
12- गज़ल: जानती हैं लड़कियाँ – डॉ अंजू दुआ जैमिनी
13- गज़ल: कुछ समझ आता नहीं – डॉ रामावतार सागर
14- गज़ल: पहली कलाई दे जाए – अनिल 'मानव'
15- गज़ल: फिर हम लोग दुनिया को – किशन तिवारी
16- गज़ल: कागज़ी पहने हुए – विजय वाजिद
17- गज़ल: इक कली की तरह – मोहन सिंह तन्हा
18- गज़ल बगावत लिखी है – पूनम सिंह
19- कविता: हार कैसे मान लें हम – डॉ रमेश कटारिया
20- कविता: एक चंदा है – बबीता प्रजापति
21- कविता: वैशाखी का दिन – जगदीश कौर

1-सम्पादकीय

साहित्य रत्न/ रामअवतार बैरवा

साहित्य रत्न महज एक पत्रिका नहीं, ये देश-विदेश के रचनाकारों का एक मंच हैं, जहाँ से हम एक-दूसरे के साथ बहुत करीब से जुड़ सकते हैं। एक - दूसरे की रचनाओं को सांझा कर सकते हैं, एक दूसरे की समस्याओं को महसूस कर सकते हैं। ये भी कि जो समस्या आसाम की है, वही गुजरात की भी है क्या ? जो संवेदना कश्मीर में महसूस की जाती, वही कन्याकुमारी में भी क्या ? पिछले वर्षों में, मैं आकाशवाणी, कारगिल में रहा, वहां मैंने लकड़ियों पर बहुत ही बेहतरीन कहानी पढ़ी। वहाँ 6 महीने बर्फ रहती है। तापमान -40 तक चला जाता है। लकड़ियां ही उनको और उनके मवेशियों को ठंड से बचाती हैं। सूर्य की असल पूजा भी वहीं होती है। वहाँ जून-जुलाई में घाटियों पर चढ़ी गायों को मैंनें दूसरी गायों के मालिक द्वारा नमक खिलाते समय रोते हुए देखा है कि हमारा मालिक हमें नमक खिलाने नहीं आया। निश्चित रूप से अन्य प्रदेश के रहवासियों को यह सुनकर आश्चर्य होगा कि नमक के लिए गाय भला क्यों रोयेगी पर बर्फ में रहने वाली गायों के लिए नमक, सांधी से भी अधिक स्वादिष्ट लगता है। वह उनके शरीर को स्वस्थ रखने की बहुत बड़ी औषधि भी है। सृजक की समस्या का केन्द्र वहां का परिवेश होता है। हर बड़ी पत्रिका ऐसे ही कंटीले और पथरीली राहों से निकलकर मुकाम तक पहुंचती है, हम उन राहों तक जाने को मुस्तैद हैं।

इतने विशाल भारत की इतनी विशाल संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, बोलचाल और पर्व-त्यौहारों की झांकी भी साहित्य रत्न जैसी पत्रिका में देखी जा सकती है। भारत के भूगोल का हर दर्रा, हर घाटी, हर टापू और हर दीप को खंगालने की कोशिश भी हमारी है। हर चरित्र , परिवेश और प्रक्रियाओं को भी हम निकट ही नजदीक से जान पाएंगे। इंटरनैटिय जमाने में जबकि हमें सारी जानकारी त्वरित और

अपडेट चाहिए होती है , आने वाले दिनों में यह सब भी साहित्य रत्न उपलब्ध करवाने में सक्षम होगा।

दरअसल आज के रचनाकारों की मूल समस्या है ललित लेखन । खासकर हिन्दी भाषियों में रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी लेखन, पत्र लेखन, समीक्षा, निबंध, आदि का घोर संकट है । साहित्यकार होने की पहली और आखिरी शर्त ही ये होती है कि वह साहित्य की तमाम विधाओं में लिखे फिर प्रमुखता जो भी रहे या सफलता जिस भी क्षेत्र में

हासिल हो। रचनाकार साहित्य की अन्य विधाओं को अक्सर पत्रकारिता मानकर छोड़ देता है। वह यह भूल जाता है कि पत्रकारिता भी 75% साहित्य है। जितने बड़े साहित्यकार रहे हैं, वे श्रेष्ठ पत्रकार और सम्पादक साबित हुए हैं ।भारतेंदु से लेकर प्रेमचंद, अज्ञेय, दुष्यंत और कमलेश्वर तक श्रेष्ठ साहित्यकार होने के साथ-साथ श्रेष्ठ पत्रकार भी थे । दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष यह भी कि साहित्यकार होने के लिए पढ़ा-लिखा होना जरूरी नहीं पर पत्रकार होने के लिए पढ़ा, लिखा होना आज की पहली शर्त है। अगर कोई पत्रकार , साहित्यकार न भी हो तो भी वह साहित्य के बहुत नजदीक रहता है। यह अंक बिना शेष विधाओं के आपके बीच इस उम्मीद में है कि जल्द ही आप सबके सहयोग से ये इन शेष विधाओं से सजा होगा। हम चाहेंगे कि हर अंक में एक आत्मकथा का अंश भी धारावाहिक रूप में प्रकाशित किया जाता रहे । साहित्य में विशेष उपलब्धियों पर साक्षात्कार भी आपको पढ़ने को मिले। हिन्दी साहित्य के विद्यार्थियों से खास अनुरोध है कि वो अपना शोध आलेख हमें अवश्य भेजते रहें। यह पत्रिका युवा मन के

बहुत ही करीब से गुजरेगी, उम्मीद है युवा मन इस पथ का राही होगा।

साहित्य रत्न पत्रिका के प्रवेशांक पर पाठकों की घनी प्रतिक्रिया भी मिली है, सामाजिक माध्यमों पर भी अच्छे कमैंट्स मिले हैं। कुछेक अंश इसमें शामिल भी किए हैं। आगे भी उम्मीद है कि आप तमाम कमियों से अवगत करवाएंगे ताकि आने वाले अंकों में निखार आ सके। पूर्वोत्तर की घाटियों से देश को निहारना निश्चित रूप से कठिन है पर यदि आप सब अपनी - अपनी छत पर खड़े मिलेंगे तो निश्चित तौर पर हम कामयाब होंगे।

-रामअवतार बैरवा

कहानी

बंद खिड़की खुल गईःअंजू शर्मा

उस रोज़ सूरज ने दिन को अलविदा कहा और निकल पड़ा बेफिक्री की राह पर! इधर वह बड़ी तेज़ी से भाग रही थी, इस उम्मीद में कि इस सड़क पर हर अगला कदम उसके घर की दहलीज़ के कुछ और करीब ले जाएगा! तेज़ बहुत तेज़, मानो उसके पांवों में मानों रेसिंग स्केट्स बंधे हों! पर आज लग रहा था, हर कदम पर घर कुछ और दूर हो जाता है! वह कौन थी? शर्लिन, शालिनी, सलमा या सोहनी। नाम कुछ भी हो, अकस्मात आ टपकी आपदाओं को इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। वे हमेशा सॉफ्ट टारगेट ढूंढ ही लेती हैं! तो उस बदहवास हालत में कहाँ पाँव पड़ रहे थे, उसे होश नहीं था। हाथ का बैग कब, कहाँ गिर गया था, उसे याद नहीं। उस मीठे जाड़े वाले सर्द मौसम एक शाल को अपने जिस्म पर कसे वह दौड़ती जा रही थी।

ऑफिस से लौटते हुए उसे अपनी एक दोस्त के यहाँ जाना था! एकाएक शहर दंगों की चपेट में आ गया! इसके बाद कुछ भी ठीक नहीं रहा! अमूमन वास्तविक दंगे शुरू होने के काफी पहले से ही स्थितियां शांति के विरुद्ध कदम बढ़ाना शुरू कर देती हैं! अफवाहें, आरोप-प्रत्यारोप हवा में घुल जाते हैं! तब तनाव धीरे-धीरे कदम बढ़ाता उस एक खास स्थान पर आ खड़ा होता है जब एक मामूली-सी चिंगारी दावानल बन जाती है और पूरी आबादी को चपेट में ले लेती है! पर इस बार ऐसा नहीं था कि हालात कुछ ठीक नहीं थे! ऐसा भी नहीं कि संशय के काले बादल पहले से मंडरा रहे थे! तो अचानक ये क्या हुआ कि एक जुलूस निकालने को लेकर हुए झगड़े की आड़ में शैतान मुस्कुराया और पूरा शहर दंगों की चपेट में आ गया!

हर ओर एक शोर था, मारकाट थी, हुजूम था और मानवता सिहर कर किसी कोने में दुबकी जान की अमान मांग रही थी! पता नहीं ये दंगे क्यों शुरू होते हैं, ये बात हमेशा पर्दे में रह जाती है और बाकी सब सड़कों पर आ जाता है। दंगों के जितने भी कारण वजूद में आते हैं दरअसल वे सब महज लिबास होते हैं उस मूल वजह का जो हमेशा अनबूझ, अनसुलझी ही रह जाती है! दंगे कौन शुरू करता है, ये तो कोई नहीं जानता पर दंगों में कत्ल हमेशा इंसानियत का ही होता है! भीड़ की कोई शक्ल नहीं होती, ईमान नहीं होता, मन्तव्य भी नहीं होता पर ये तकरीबन तय है कि भीड़ के आतंक को दिशा की कोई जरूरत नहीं होती!

रास्ता अब उसकी पहचान के दायरे से बाहर निकल चुका था और आगे का रास्ता दिमाग नहीं डर तय कर रहा था! उसके भागते हुए, बदहवास कदम, रास्ता मुड़ने पर, मुड़ते गए और कुछ देर बाद वह एक गली में थी! थोडा आगे उसने खुद को गली के आखिरी छोर पर एक मकान के सामने पाया! लकड़ी के तख्तों से बने मेन गेट को धकियाकर वह घुसती चली गई! सामने छोटे-से बरामदे के पार एक लकड़ी का दरवाज़ा था उस पर एक सांकल चढ़ी थी! लड़की ने हिस्टीरियाई अंदाज़ में दरवाज़े को झंझोड़ा! सांकल हाथ लगते ही उसने जल्दी से उसे खोल दिया! भीड़ का शोर बाहर सड़क पर दूर कहीं, बहुत पीछे छूट गया था! बुरी तरह हांफते हुए, उसने झाँका तो यह एक खाली कमरा था! आसमान में गहराए अँधेरे पर एक नज़र डालकर वह बदहवास-सी भीतर चली गई!

घर में घुसते ही उस पुराने, अधटूटे, लकड़ियों के दरवाज़े पर लटकी लोहे की सांकल लगा ली और एक कोने में बैठ गई! मुश्किल से साँसों की रफ्तार कुछ थमी। उखड़ती साँसों पर काबू पाकर लड़की ने अपनी विस्फारित आँखों को कुछ पल

मींच लिया। सुन्न कनपटियाँ, अंधेरा और वातावरण की ऊष्मा पाकर कुछ पल सामान्य हुई तो आँखों में पसरा सारा डर, सारी पीड़ा तरल हुए और बांध टूट गया। पलकों के कोरों से सैलाब बह निकला। अपनी सुबकियों को नियंत्रित करते हुये वह दुपट्टे के कोने से आँसू पोंछती रही। मुंह पर रखा उसका बेरहम हाथ तो जबान पर नियंत्रण में करने में कामयाब रहा, वहीँ कुछ चीखें उसके हलक में कांटे-सी अटकी रही पर बेहिसाब आँसू जाने कब से जमा थे, रुकते ही नहीं थे। उसके कानों में अब भी पगलाई भीड़ का शोर था, जेहन पर अब भी पगलाए-उजड़ते शहर की तस्वीर कौंध रही थी!

धीरे-धीरे रोना तो थम गया पर पिछले कुछ समय की रुलाई अब भी घुटी सुबकियों और गूंगी हिचकियों की शक्ल में एक सिलसिला बनाए हुये थी। कुछ पल संभलने के बाद जब आँखें उस अंधेरे की अभ्यस्त हुईं तो लड़की ने उन्हे रोने से मुक्ति दी और उस कमरे में चारों ओर नज़र घुमाने लगी।

वह एक हालनुमा कमरा था जिसका एक ही दरवाजा था! पूरे कमरे में अँधेरे का शासन कायम था और वह जो अंधेरे से डरती थी, उसे आज अंधेरा भला-सा मालूम हो रहा था। टूटे दरवाजे के नीचे से और बड़ी-बड़ी झिर्रियों से स्ट्रीट लाइट छनकर आ रही थी। उसे लगा दरवाजे के नीचे से रेंगकर आता रोशनी का नाग आएगा और उसका गला दबोच लेगा। उसने अपने पैरों को ख़ुद से सटाया और एक गठरी की शक्ल में अपने घुटनों पर सर टिका लिया।

कुछ क्षणों बाद उसकी निगाहें एक वृत की आकृति में उसके ठीक दायें से शुरू होकर पूरे कमरे का चक्कर लगा कर ठीक बाएँ आकर रुक गईं। जालीदार रोशनदानों से आती रोशनी में कमरे का कुछ हिस्सा वह देख पा रही थी कि इस हॉलनुमा कमरे में करीब आधे हिस्से में शायद कढ़ाई-सिलाई की मशीनें लगीं थी जो अधढकी थीं। दीवार पर कुरान की आयतें मढ़वा कर टांगी गई थीं। एक कोने में कुछ सामान था, जो अंधेरे में ठीक-ठाक नज़र नहीं आ रहा था। दीवारों पर पान की पीकें थीं और एक कोने में दो बड़े-बड़े मटके रखे थे।

उस दिल तेज़ी से धड़का, "*हे, भगवान, ये मैं कहाँ आ गई!!!*" उसे एकाएक हलक सूखने का अहसास हुआ, ये अहसास का लौटना इस बात की तसदीक कर रहा था कि वह अब तक ज़िंदा थी।

उसने गिलास में पानी भरा और एक झटके में गिलास खाली कर दिया। एक गहरी सांस ली और दूसरी बार गिलास में पानी भरकर वह वापिस अपनी जगह पर बैठ गई और धीरे धीरे पीने लगी। हलक तर हुआ तो उसे लगा वह फिर रो पड़ेगी। उसका अंदाज़ा गलत नहीं था।

अब उसे माँ की बातें याद आने लगी। कहा था न माँ ने, *"आज शाम को मत जाओ! रविवार को दिन में चली जाना! जानती नहीं क्या वो इलाका कहाँ पड़ता है? मेरा मन नहीं मानता बिट्टो, देर हो गई और कुछ हो गया तो? क्या भरोसा उन लोगों का .....* " सब याद आया, माँ की चिंता, माँ का टोकना और माँ का गुस्सा सब कुछ। वह खुद को कोसने लगी कि माँ का कहा मान, आज रुक क्यों न गई। आखिर एक माँ का मन कभी झूठा नहीं होता, जाने कैसे अपनी संतान के लिए आने वाली बलाएँ उसे साक्षात दीखने लगती हैं, वह उनकी आहट और आशंकाओं से सहम जाती है पर किसी को समझा न पाने की स्थिति से जूझती जाने कितने ही डरों से आतंकित रहती है।

लड़की ने एक लंबी सांस ली और उसकी सोच का केंद्र अब माँ थी। उसने धीमे से कहा *'माँ'* और सोचा कि अगर इस बार वह यहाँ से सुरक्षित घर लौटी तो माँ से अपनी तमाम लापरवाहियों और हाल में की गई नाफ़रमानियों के लिए माफी मांगेगी। सोच की रफ्तार जब थोड़ा थमी तो उसने सिलसिलावर उन सारी बातों के बारे में सोचा जो माँ की नसीहतों की शक्ल में उस तक आना चाहती थी पर उसके इर्द-गिर्द बुने व्यस्तताओं के घेरे में दाखिल न हो सकीं। वह माँ की उसी रोक-टोक और उसकी डांट के लिए फिर से माँ के पास लौटना चाहती थी। एक उड़ते-से ख्याल ने उसे छुआ, शायद वह किसी की माँ बने बिना इस दुनिया से चली जाएगी। इस ख्याल की आमद ने उसे और उदास कर दिया!

कहीं दूर सड़क से शोर का एक रेला गुज़रा तो लगा जैसे मौत अब भी जैसे कुछ ही कदमों पर नृत्यरत थी। उसे लगा *'वे लोग'* आते ही होंगे! 'वे' अब आए और उसका सर धड़ से अलग! उफ़, तो क्या आज की रात मौत के दबे कदमों की

आहट सुनते हुये बीतेगी! आशंकाओं के सैंकड़ों बिच्छुओं ने एक साथ उसे घेर लिया! लड़की इतनी सहमी थी कि सुबह का ख्याल उसके नजदीक आने से डर रहा था। वह सुबह, सूरज और जिंदगी के बारे में सोचना चाहती थी पर सोच जैसे लकवाग्रस्त हो घिसट रही थी। उन 'बेरहम' लोगों का डर कुछ इस तरह छाया हुआ था कि लड़की के करीब बस अंधेरा, मौत का ख़्याल और खौफ ही रह गया था।

बाहर हवा में सर्दी घुल रही थी जिसका एक अंश उसे छूते हुये सिहरा गया। उसने अपने शॉल को अपने गिर्द लपेट कर खुद को अपनी बाहों में कसा तो उसे उन दो मजबूत बाहों की याद हो आई जिन्हे वह अक्सर छिटक दिया करती थी। उसे लगा उनके बीच आशियां बनाती उन दूरियों के लिए वही जिम्मेदार थी, उसका प्रेमी नहीं, जो उन दूरियों की पगडंडियों पर चलकर उसकी बेरुखी की दीवार पर नाराजगी के अफसाने लिखता, अभी कुछ दिन पहले ही उससे दूर हो गया था।

आज वह उन बाहों की कैद में खोकर उसके कान में कहना चाहती थी कि उसे उससे नहीं खुद से डर लगता था। वह उससे नफरत की नहीं, अपने डर की कैद में थी। उसने साथ बिताए लम्हों के बारे में बारहा सोचा। मरने से पहले वह उसके चेहरे पर बेशुमार चुंबन बरसाना चाहती थी। पर एक पल के लिए उसे लगा कि वह अब कभी उससे नहीं मिल पाएगी। उसने अपनी तमाम बेरुखियों और बदतमीजियों के लिए खुद को जीभर कोसा। उसने जीवन से जुडी अनिश्चितताओं को कभी वक़्त नहीं दिया और न ही प्यार को! मन के किसी कोने में एक इच्छा ने सिर उठाया। अगर यह उसके जीवन की अंतिम रात है तो ये सर्द रात आज वह अपने प्रेमी की बाजुओं के घेरे में, उसके सीने पर सर रखे गुजारना चाहती थी। कम से कम उसके प्यार को महसूस किये बिना वह दुनिया से कैसे जा सकती थी!

यूं लड़की अपने आप को बेतरहा कोस रही थी पर इस अकेले कमरे और भय और अनिश्चितता भरी रात में वह खुद की एकमात्र साथी थी, भला खुद से कब तक नाराज़ रहती। वह एक बार फिर खुद के पास लौट आई। उसने जैसे ख़ुद को ही धीमे से थपथपाया और लौट आई अपने खोल में, जिसमें कुछ देर पहले उसका दम घुट रहा था।

दीवार से टेक लगाए शाल में काँपती, वह ऊंघ रही थी। धीरे-धीरे बोझिल हुई पलकें भारी हो चली थीं। रात का तीसरा पहर भी अब बीत चला था। कहीं दूर मस्जिद की अजान से उसकी झपकी टूटी तो बाहर पक्षियों की चहचहाहट ने उसे अहसास दिलाया कि सुबह होने ही को है। उसने खुद को तसल्ली देने की एक और कोशिश पर दूर-दूर तक इत्मीनान की आमद की तो कोई आहट नहीं थी!

कुछ देर बाद झिर्रियों से मद्धम रोशनी कमरे में आने लगी जो स्ट्रीट लाइट की नहीं थी। ये रोशनी सुबह की आमद का पैगाम लाई थी। आखिर रोशनी के कन्धों पर सवार सुबह आने को थी पर लड़की एक बार फिर चिंता में पड़ गई। अब वह यहाँ से सुरक्षित निकलने के बारे में सोच रही थी। सारे इष्टदेवों को मनाती लड़की बिलकुल अपनी माँ की प्रति प्रतिमूर्ति में बदल गई थी! बाहर एक-एक कर घरों के दरवाजे खुलने की आवाज़े हो रही थीं! दंगों के मारे जड़ हुई गली जाग रही थी! हर हलचल मानों उसका कलेजा निकाले जाती थी!

ठक-ठक-ठक.....तभी कुछ कदमों की आहट ने उसकी दिल धड़कनों को बढ़ा दिया। कदमों की आहट इस दिशा की ओर करीब आती जा रही थी, बेहद करीब।

लड़की का दिल धाड़-धाड़ उसकी पसलियों पर बज़ रहा था और एक आवाज़ पर उसे लगा उसकी धड़कने जैसे रुक जाएंगी। दरवाजे के बाहर चहलकदमी और फिर दरवाजे पर धम-धम आवाज़ हुई। बाहर शोर था, कुछ आवाज़ें पुकार रही थीं पर उसे तो मौत की पुकार के अतिरिक्त कुछ सुनाई नहीं पड़ रहा था! सूखे पत्ते की तरह कंपकपाते, उसने डरते हुये उठकर झिर्रियों के बाहर झाँका।

कुछ पांव जिनमें जूतियां थी! तिल्ले वाली जूतियां, कुछ पठानी सलवारों के पाँयचे! *'वे लोग'* आ गए थे!

"हे ईश्वर, तो जिंदगी का अंत यहीं होना लिखा था!" उसकी अस्फुट फुसफुसाहट का अनुवाद यदि कुछ होता तो यही होता!

दरवाज़ा बजा, जोर से कई बार बजा और इस बार इतनी जोर से खड़काया गया कि धड़ाम की आवाज़ के साथ अटकी हुई पुरानी सांकल गिर गई! एक शोर ने उसे और कुछ सायों ने जैसे रोशनी को घेर लिया!

उसने सर उठाया तो पठानी सलवारों वाले पांवों के साथ कुछ गोल सफ़ेद टोपियां भी नमूदार हुई! दो, तीन, चार और फिर कई सारे! ओह, ये वही थे, वही लोग जिनका माँ को कोई भरोसा नहीं था! जिनके दिल में कोई रहम नहीं होता, वह सुनती आई थी! उसे लगा वह एक गहरी सुरंग में दाखिल हो गई है, गहरी अंधी सुरंग, जिसके आगे एक गहरी खाई थी जिसमें वह गिरी तो गिरती चली गई!

ठंडे पानी के कुछ छींटे उसे वापिस उसी दुनिया में ले आये! होश आया तो अपना सर एक बुजुर्ग खातून की गोद में पाया, जो उसे गिलास से पानी पिला रही थी! मतलब वह अभी तक जिन्दा थी!

"कौन हो बीबी? यहाँ कैसे पहुंची? तुम ठीक हो न? फ़िक्र न करो, अल्लाह सब अच्छा करेगा! मियां इमरान, भई, बच्ची के लिए चाय लाओ! ऐ देखो तो कैसे काँप रही है!!!"

कुछ सवाल, एक जुमला और फिर एक पुकार, उसे लगा किसी ने मानों जिंदगी को आवाज़ देकर पुकारा! एक चाय का कप, उसे थामे हुए दो स्नेहिल, झुर्रियों भरे हाथ, कुछेक उत्सुक आँखे, और उसने पाया सुरंग के आगे रोशनी की किरणे थीं! रोशनी ही नहीं, साथ में जिंदगी ने भी मौत को धकियाकर उसका हाथ थाम लिया! माँ और ज़माने की बनाई तमाम तस्वीरें धुंधली होने लगी, फिर जैसे सब कहा-सुना उस रोशनी में विलीन होता गया! उन हाथों की गर्माहट में वे मुश्किल पल पिघले तो पिघलते गए, साथ ही दरकती गईं, बचपन से दिलो-दिमाग पर अंकित कुछ छवियाँ, ध्वस्त हुईं कुछ गढ़ी हुई मान्यताएं और बहता चला गया सारा विषाद! अब उनकी जगह उसके स्कूल-रिक्शावाले सादिक चचा, प्राइमरी स्कूल टीचर फातिमा मैम और कई चेहरे थे जो जीवन की स्मृतियों की एल्बम पर जमी समय की धूल हटा नई तस्वीरों में बदल रहे थे!

थोड़ी देर बाद वह एक जीप में बैठी थी। 'इमरान' जीप चला रहा था और जीप मेन सड़क पर दौड़ रही थी। सुबह हो चुकी थी। सूरज की मद्धम किरणों का स्पर्श उसे भला मालूम हो रहा था और वह खुश थी कि एक काली भयावह मौत के आगोश में बसर रात के बाद रोशनी फिर से मुस्कुरा रही थी। उसने महसूस किया 'उन लोगो' की बुराई दरअसल एक परछाई थी जो विश्वास की घनी धूप के ढलते ही अपना कद बढ़ाने लगती थी! आज वह उस परछाई को दूर छोड़ आई थी! मानों उसने आशा के काँधे पर पैर रख हाथ बढ़ाया और सुकून का फल उसके हाथ में था!

सुबह की रोशनी में उम्मीद के नन्हे पंछी ने पंख संवारे और एक ऊंची उड़ान भर उड़ चला आकाश की ओर! वहीं दंगो के कहर से डरा हुआ शहर कुनमुनाया और सूरज की ओर आशा से देखने लगा! पुलिस के साये में ही सही, थमी ज़िंदगी रफ्तार से आगे बढ़ रही थी! उसने शाल को कसकर लपेट लिया और पीछे भागती सड़क को देखने लगी जिसके साथ ही छूटते जा रहे थे, वे सारे भयावह लम्हे जो कल रात से उसके वजूद से चस्पा थे! कल तक जिस उम्मीद के सिरे लुप्त होते प्रतीत होते थे वो अब बेहद करीब होने का अहसास करा रही थी! हाँ, वह सही-सलामत घर लौट रही थी! रास्ते में रात भर अंधेरे और डर में डूबे घरों की खिड़कियां खुल रही थी! उसने पाया उसके जेहन में जाने कब से बंद एक खिड़की खुल गई थी, लगा दिमाग में लगे सारे जाले हट गए! अब वहां कोई संशय नहीं था, डर नहीं था, बस था तो उजला-उजला सवेरा! तभी सूरज, सुबह और ज़िंदगी के ख्याल ने उसे होले से उसे अपनी गिरफ्त में ले लिया और इस बार उन्हें रोकने वाला कोई नहीं था, कोई भी नहीं!

नाम : अंजू शर्मा

मूलतः राजस्थान से, स्थायी रूप से दिल्ली में जन्म और रिहाइश।

गुड्डी का सिलेबस : मनीष कुमार सिंह

घर के बाहर निकलते वक्त सुनयना दरवाजे पर कुछ याद करके रुकी। बिस्तर पर अधलेटी होकर पढ़ाई कर रही गुड्डी से बोली,''देखो ठीक पॉच मिनट बाद गैस बन्द कर देना। प्रेशर कुकर चढ़ा रखा है।'' उसने कोई जवाब नहीं दिया और अपने काम में लगी रही। ''अरी जरा मेरी बात सुन। पॉच मिनट बाद गैस बन्द कर देना।'' सुनयना ने जरा तेज आवाज में कहा। बिना देखे गुड्डी ने जवाब दिया। "अच्छा कर लूंगी।"

गैस का सिलेण्डर बुक करने के लिए कई बार फोन करने का प्रयास किया गया लेकिन नम्बर लगता ही नहीं था। सुनयना ने सड़क पर आते-जाते सिलेण्डर वालों को रोककर सिलेण्डर देने का अनुरोध किया। सबने हॉ-हॉ कहके आश्वासन दिया पर किसी ने घर नहीं पहुँचाया। इसलिए वह सामने गैस एजेन्सी में काम करने वाली की पत्नी के पास पहुँची। ''बहनजी जरा भाई साहब से कहलवा कर सिलेण्डर मंगवा दीजिए। बड़ी मुसीबत है। कोई सुनने को तैयार नहीं है।''

वह मुस्करायी। ''हो जाएगा। चिन्ता मत कीजिए। बैठिए पानी पीजिए।'' सुनयना को काम करवाना था। इसलिए वहाँ बैठकर थोड़ी देर हाँ जी, हाँ जी भी करनी पड़ती। जब उसने चाय पिलाने की पेशकश की तो वह झटके से उठ गयी। ''नहीं बहनजी लड़की को छोडकर आयी हूँ। अकेले वह पढ़ती नहीं है।''

एक अटका हुआ काम निपट गया। वह तनिक निश्चिंत होकर घर लौटी। किचन में देखा कि कुछ जलने की गंध आ रही है। कुकर का नॉब हटाकर भाप निकाली और ढ़क्कन खोला तो पाया कि तली में कुछ चावल जलकर चिपके हुए थे। वह झल्लायी। ''अरे गुड्डी तूने गैस बन्द नहीं किया था?''

''किया तो था।''

''तो फिर देर से किया होगा। हाय राम यह लड़की कहॉ जाएगी। अब खाना यही....। किसी काम की नहीं है।'' उसका गुस्सा कम नहीं हो रहा था।

''ममी मैंने बन्द तो कर दिया था।'' गुड्डी अपने को गलत मानने को तैयार न थी।

''पॉच मिनट के अन्दर....?'' सुनयना का क्रोध और बढ़ा। वह उसके पास आ गयी। नजदीक आकर देखा कि वह ड्राइंग कर रही थी। ''देखो महारानी जी को! मैं सोच रही थी कि बेटी पढ़ाई कर रही है और ये कागज गंदे करने में लगी है।''

''ममी अभी तो शुरु किया है। तबसे पढ़ रही थी।'' उसे सफाई दी।

सर पर हाथ रखकर सुनयना बोली,''जा अपनी उम्र के बच्चों को देखा। तुम अब इतनी छोटी भी नहीं रही। अगले साल सेवेंथ में जाओगी। पल्लवी, श्रेया वगैरह सबके कितने अच्छे मार्कस आए हैं। उनका एटिकेट देखो। एक तुम हो कि जरा भी होश नहीं रहता है। स्कूल बैग कहॉ पड़ा है, जूते किधर हैं कुछ पता नहीं।'' ममी को नाराज देखकर गुड्डी ने ड्राइंग का सामा समेटा और कोर्स की किताबें लेने चली गयी। जाते हुए उसने अपनी ममी की वाणी सुनी। ''इस कम्पीडिशन के जमाने में जो सावधान नहीं रहेगा वह हमेशा के लिए पिछड़ जाएगा।''

गुड्डी की स्कूल की पढ़ाई से वह खुश नहीं थी। शाम को ऑफिस से आने के बाद सुरेन्द्र से ही सारा होमवर्क कराना पड़ता था। खासकर उसका मैथस् और इंग्लिश कमजोर था। साइंस में भी मदद की जरुरत थी। अब क्या बचा। बाकी सब्जेक्टस् तो सारे स्टूडेन्टस खुद कर लेते हैं। क्लास में टीचर सोए रहते हैं। न ग्रामर समझाएगें न ही एलजेबरा। बस खानापूर्ति और बेमतलब के तामझाम करेगें। इसलिए उसे पिछले दिनों ट्यूशन लगवाया था। आखिर मॉ-बाप भी कितना करें। ट्यूशन में कम से कम स्टूडेन्ट अपनी मुख्य दिक्कतें बयान करके सुलझा सकता है। गुड्डी के साथ वह कुछेक अलग तरह की समस्याएँ देख रही थी। एकाग्रता का नितांत अभाव, बात न मानना, अपने खेलकूद के आगे किसी चीज पर ध्यान न देना आदि। टेबल के नीचे से कागज की कतरनें, फाड़े गए पन्ने और गुडिया की सजावट की चीजें मिलती। सुरेन्द्र से जब इसकी चर्चा की तो वे शांत स्वर में बोले कि बचपना है। धीरे-धीरे दूर हो जाएगा।

''खाक दूर हो जाएगा।'' वह झुँझलायी। ''बचपना बस इसी के लिए है? सौरभ की मम्मी सारे मुहल्ले में यह सुनाती फिर रही थी कि उसके बेटे का क्लास में फस्ट पोजिशन आया है। इसी की उम्र की पल्लवी को डांस कम्पीडिशन में एवार्ड मिला है। एक ये है। जब देखो तब पार्क में अपने से छोटी उम्र के बच्चों के साथ भी खेलती रहती है। पता नहीं कब बढ़ी होगी। हरदम पार्क में खेलना ठीक है? न जाने कैसे-कैसे लोग आते हैं।''

एक दिन उसे अपने पास बिठाकर सुनयना ने बड़े प्यार से समझाया। ''देखो तुम्हारे पापा ने कितनी कोशिश के बाद अच्छी नौकरी पाई है। पहले हमारा अपना घर नहीं था। अब जाकर लिया है। बेटा जिन्दगी में बिना मेहनत के कुछ नहीं मिलता।''

''ममी अगर मैं अच्छे मार्कस् लाई तो मुझे नानाजी के घर ले चलोगी?'' वह यह सुनकर हतप्रभ रह गयी। उनका देहांत हुए साल भर हो चुका था। अब उस उजाड़ घर में कौन रहता है। बड़ा सा हवेलीनुमा घर भॉय-भॉय करता रहता है। न वहॉ नाना रहे और न ही नानी मिलेगीं। यह लड़की क्या बोल रही है? अनायास ही सुनयना की ऑखें नम हो गयीं। ''अब वहॉ जाकर क्या मिलेगा बेटा?.....वहॉ कौन बचा है?''

''नहीं ममी मुझे बस नानाजी का घर देखना है।'' वह फिर भी तर्कातीत हठ करती हुई बोली। ''मैं उनके रहने का कमरा, पूजा वाली कोठरी सब देखूगीं। गाय कहॉ पर बॉधी जाती थी मुझे वो भी देखना है। ममी मैं ये सब देखकर वापस आ जाऊगी। प्रॉमिस... प्लीज...।'' वह उससे लिपटकर अनुनय करने लगी। ''अच्छा चल देखते हैं।'' उसे कुछ समझ न आने पर उसे टरकाना चाहा।

''नहीं ममी आप बहुत झूठ बोलती हो। पिछली बार आप खुद चली गयी थीं। मुझे नहीं ले गयी। प्रॉमिस किया था कि जरुर ले जाउगी लेकिन नहीं ले गयी।'' वह ठुनकने लगी। हे भगवान इस लड़की का क्या करे। वहॉ जाना कितना जरुरी था यह वह क्या जाने। ऊधर की पॉलिटिक्स कैसी चल रही है यह मैं जानती हूॅ। मॉ-बाप के न रहने पर सारे रिश्तेदार जमीन-जायदाद पर गिद्द दृष्टि जमाए हैं। कब मौका लगे कि हाथ साफ करे। बिना वहॉ का मसला सुलझाए कैसे काम चलेगा। भईया को भी इसलिए उधर आना पड़ा। कौन वहॉ हर गर्मी की छुट्टी में जाना हो पाएगा। आखिरी दौरा ही समझो। उधर खुद रहने का ठिकाना नहीं। क्या बनाओ, कैसे खाओ। बच्ची को कैसे लेकर जाते? कौन है पूछने वाला? पहले वाली ठसक से अब नहीं जा सकती। मॉ-बाप के बगैर औरत का मायके पर क्या हक?

इंसान अपने प्रारंभिक जीवन की स्मृतियों को ताउम्र याद रखता है। कई बार यह आदत मुसीबत बन जाती है। अब गुड्डी को ही लीजिए। ननिहाल के हर बात की चर्चा करती है। गर्मी की लम्बी छुट्टी में जब जाती थी तो वनमुर्गी की तरह निद्धन्द्ध विचरती थी। यहॉ फ्लैट के बंद माहौल में जैसे समय कटती है। मन लगाने के लिए यातो टी.वी. से चिपकी रहेगी या फिर फालतू में ड्राइंग-वाइंग करके पन्ने खराब करेगी। इस मामले में उसका छोटा वाला गुल्लू बिल्कुल सही है। न केवल इसका जन्म यहाँ हुआ है बल्कि बचपन भी यही व्यतीत हुआ है इसलिए यादों की सलीब लादना उसे नहीं आता। दिन भर खेलता-कूदता है। छोटी क्लास में है। ज्यादा सिलेबस नहीं है। थोड़ा बहुत पढ़ भी लेता है। यहीं की भाषा व बोली बोलता है। ज्यादा से ज्यादा अपने स्कूल के दोस्तों की बात करता है। कौन नाना और कौन मामा यह उसे याद नहीं है। बस मॉ-बाप और दीदी ही उसकी दुनिया है। सुरेन्द्र से वह कतिपय अवसर पर गुड्डी के व्यवहार की चर्चा कर चुकी थी। वे सारी बात सुनकर गंभीतापूर्वक कहते। ''चिन्ता की बात नहीं है। यह सब नॉरमल है। बस खेलकूद के साथ-साथ पढ़ाई-लिखाई भी चलती रहे।....इसके दोस्त वगैरह है?''

'' हाँ,'' सुनयना ने कहा,''सामने वाली की बेटियों से अच्छी पटती है। रोज शाम को साथ खेलते हैं।''

कुर्सी पर बैठकर चावल चुनती सुनयना से लिपटकर गुड्डी बोली,''ममी मुझे कुछ चावल दो ना।''

''क्या करोगी इसका?''

''गौरैया को खिलाना है।''

उसे थोड़े से चावल देकर वह मुस्करायी। चावल लेकर जाने की बजाए गुड्डी बोली,''ममी हम नानाजी के घर कब चलेगें? वे मुझे व्हाइट रसगुल्ले खिलाते थे। वहॉ जाने का बहुत मन करता है। जब भी कहती थी कि नानाजी ला दीजिए तो वे हमेशा लाकर देते थे।'' सुनयना भावुक हो गयी। ''बेटा अब नानानी कहॉ रहे? मैं तुम्हारे लिए शाम को बाजार से ले आउॅगी।....पर ज्यादा मत खाना। यह सब खाकर मोटी हो जाओगी। बनारस वाली मौसी के बच्चों की तरह। एक बार वजन बढ़ जाए तो बड़ी दिक्कत होती है उसे कम करने में।'' ममी को डिमांड मानने के बाद उस पर शर्ते लगाना उसे अच्छा तो नहीं लगा पर चलो खाने को तो मिलेगा। वह भाग कर दीवाल पर चावल बिखेरने चली गयी। वहॉ उसने पहले से एक कटोरे में पानी भी भर कर रखा था। काफी इंतजार करने के बाद भी जब कोई चिड़िया नहीं आई तो वह दुबारा अपनी मॉ के पास गयी। ''ममी देखो ना एक भी गौरैया नहीं आयी। एक बार मुझे दिखी थी पर हमेशा नहीं मिलती। मुझे नानाजी के घर क्यों नहीं ले जाती? वहॉ ढ़ेर सारी गौरैया हैं। मैं उन्हें छत पर चावल खिलाती थी। पीने के लिए दीया में पानी रख देती थी। वे आकर खा-पी कर चली जाती थीं। पता है....एक बार गौरैया तो बिल्कुल मेरे पास तक आ गयी थी। मन किया कि उसे छू लूॅ पर वह उड़ जाती इसलिए मैंने ऐसा नहीं किया। ममी बताओ ना हमारे घर में कोई चिड़िया क्यों नहीं आती है?'' सुनयना क्या बोलती। कैसे बताए कि आज के बिल्डिगों की आधुनिक स्लीम डिजाइन में उनके घोंसलों के लिए कोई जगह नहीं होती है। या फिर यह किसी प्रदूषण अथवा कीटनाशक का प्रभाव होगा कि उन्हें अपनी खुराक नहीं मिल पा रही होगी। पहले की इमारतों की दीवालों, ऑगन, बिजली के तारों के बेतरतीब फैलाव में इतनी जगह होती थी कि वे अपना घोंसला बना सके। तब वे बिल्कुल घरेलू लगती थीं।

सुनयना को अभी तक याद था कि शादी के पहले उसके मायके में काम करने वाली एक बूढ़ी नौकरानी कहती थी कि इंसान के बच्चे की आत्मा चिड़िया के घोंसले में पनपती है।

सुरेन्द्र के ऑफिस में एक सहकर्मी ने अपने बेटे के मनोवांछित कॉलेज में पसंदीदा सब्जेक्ट के साथ प्रवेश पर मिठाई बॉटी थी। सुरेन्द्र भाई लड़के का कैरियर सिक्योर हो गया। मेरे दिल से बड़ा बोझ हट गया है। यह बात उन्होंने घर आकर बातों के दरम्यान सुनयना से बतायी। वह सोचती रही। फिर कहने लगी,''देखो मुझे लगता है कि गुड्डी का स्कूल अच्छा नहीं है। पिछले पैरेन्टस् टीचर मीटिंग में जब हम लोग क्लास में गए तो बच्चे कितना शोर मचा रहे थे। टीचर वहीं मौजूद थी लेकिन अपने में मगन। मेरी सहेली का बेटा ग्रीनफिल्ड में है। बता रही थी कि पढ़ाई का स्टैण्डर्ड बेहद हाई है। डिस्पिलिन इतना कि क्या मजाल क्लास और स्कूल कैम्पस में कोई ऐसी वैसी हरकत करे।''

सुरेन्द्र ने उसकी बात धैर्यपूर्वक सुनकर कहा,''केवल स्कूल ही सब कुछ नहीं होता है....बहुत कुछ घर के माहौल और बच्चे पर डिपेंड करता है। पुराने वाले स्कूल से भी तुमने यही कहकर इसका नाम कटवाया था। लेकिन दोनों के रिजल्ट में मुझे कुछ खास फर्क नहीं दिखता।'' पति से पूर्णतया सहमत न होते हुए भी वह चुप रही। शायद उसे कोई बेहतर विकल्प नहीं दिख रहा था। पत्नी की चिन्ता को गंभीरता से लेते हुए सुरेन्द्र ने विचारमग्न मुद्रा में कहा,''देखो हॉस्टल का पता करते हैं। वहॉ के डिस्पिलिन में पढ़ाई ठीक होगी।'' सुनयना ने विषय से हटकर एक बात यह बतायी कि भईया का फोन आया था। कह रहे थे कि बाबूजी का मकान बेच देने में ही भलाई है। इतनी दूर से वहॉ का मामला सॅभालना मुमकिन नहीं है। खुराफात करने वाले कई हैं।

रात को सुरेन्द्र ने गुड्डी को बुलाया और प्यार से उसकी पढ़ाई का हाल पूछा। ''पापा मेरे सारे सब्जेक्टस् में बहुत अच्छे मार्कस् आए हैं। पता है इंग्लिश वाली मैम ने मुझे वैरी गुड दिया।'' फिर वह विषय से तनिक परे हटकर बोली,''पापा मुझे स्काउट्स में एडमिशन करवा दीजिए ना। बड़ा मजा आता है। सारे बच्चे मजे करते हैं। नाश्ता भी स्कूल से मिलेगा।''

''ठीक है बेटा करवा देगें,'' वे बोले। ''लेकिन मार्कस् अच्छे लाने का मतलब सब्जेक्टस् को पूरा समझना नहीं है।

तुम्हें इंग्लिश और मैथस् में काफी प्रैक्टिस करनी पड़ेगी। बेटा आगे की क्लास में सिलेबस और मुश्किल होगा। बचपना छोड़कर तैयारी करो।''

वह अपनी रौ में थी। ''पापा मैं पढ़ती तो हूँ। पल्लवी, श्रेया इन सबके मुकाबले मेरे मार्कस् कम नहीं हैं....।''

''मैंने कब कहा कि तुम पढ़ती नहीं हो।'' सुरेन्द्र ने बीच में हस्तक्षेप किया। उनका तरीका सुनयना की तरह भावप्रवण न होकर तार्किक होता था। ''लेकिन बस इतने से काम नहीं चलेगा। कोर्स की किताबों के अलावा खाली वक्त में जी.के. इम्प्रूव करो। जहॉ जरुरत पड़े मुझसे पूछो।'' कुछ समय के हितोपदेश के पश्चात् उन्होंने अपनी सुविधानुसार बात खत्म करते हुए उससे कहा। ''अच्छा अब जाकर आराम करो। कल स्कूल है।''

वह जाने लगी। सहसा पीछे मुड़कर बोली, ''पापा मुझे व्हाइट वाला रसगुल्ला खाना है। वही जो नानाजी मेरे लिए लाते थे। मुझे बहुत पसंद है। प्लीज... पापा।'' सुरेन्द्र की गुरु गंभीर मुद्रा में उसकी इस मॉग से परिवर्तन आया। ''ठीक है बेटा। ला दूँगा।''

गुड्डी बिस्तर पर गयी। लेकिन जाते ही सो नहीं गयी। गुल्लू के साथ किस्से-कहानी कहने लगी। कुछ अपने खेलकूद की बातें भी होने लगीं। ''अच्छा तू बता कोई दुनिया से आउट कब होता है।'' नन्हा गुल्लु सोचता रहा फिर ऑखें मटकाकर बोला,''जब वह भगवान जी के पास चला जाता है।''

''हट...जब वह स्पेस में जाता है।'' वह खिलखिलाकर हॅस पड़ी। वह भी पूरी बात समझते हुए भी हॅसने लगा।

इधर सुरेन्द्र गुड्डी के स्टडी टेबल पर गए। उसकी किताबों-कॉपियों को देखते-पलटते उन्हें गत्ते के टुकड़ों पर बनी हुई ड्राइंग मिली। कुछ जानवरों की थी तो एक पर घर के समस्त सदस्यों की तस्वीर बनी थी। लिखा था- पापा, ममी, मैं और गुल्लु। हाथ से बनी एक छोटी सी डायरी भी मिली। उसने कागज काट कर बनायी थी। उसमें घर का फोन नम्बर, ममी-पापा के मोबाइल नम्बर और स्कूल के कुछ बच्चों के नाम व फोन नम्बर लिखे हुए थे। ऊपर लिखा था माई स्मॉल डायरी। यह सब देखकर उन्हें अच्छा भी लग रहा था पर ऐसे कैसे काम चलेगा? उसे अब सीरियस हो जाना चाहिए। वे ये सारी सामग्री अपने साथ ले गए। कोई जरुरत नहीं है इन सबकी।

तभी उधर से सुनयना आई। ''मैं आपको बुलाने जा रही थी। बिजी देखा तो खुद चली आयी। जरा ये देखिए। मुझे अपने घर के मंदिर के पास से मिला है।'' उनकी तरफ एक लिफाफा बढ़ाया। सुरेन्द्र ने उसे खोला। गुड्डी की लिखावट का एक पत्र जैसा कुछ था। नाना जी मैं आपके घर आना चाहती हूँ लेकिन ममी मुझे आने नहीं दे रही है। खुद अकेले चली गयी। मुझे आपके घर में रहा है। क्या मैं रह सकती हूँ? मुझे वहॉ जाने का मन तो बहुत है पर कैसे आऊँ? आप ही बता दीजिए। फिर आप भूत बनकर मुझे व्हाइट वाला रसगुल्ला खिला देना। और अपने साथ नानी जी को भी लाना जिससे मैं उनसे मिल सकूँ। नाना जी आप पक्का आना या तो फिर अपने दोस्त को भेज देना। मैं उनसे आपका हालचाल पूँछ लूँगी। और नाना जी मुझे भी अपने पास जल्दी से बुला लेना। हमलोग खूब मजा करेगें। आपकी गुड्डी।

सारा पढ़ लेने के बाद उन्होंने लिफाफे को उलट-पुलट कर देखा। उस पर लिखा था नाना जी के लिए। साथ में उनका नाम हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में आधा-आधा लिखा था। फ्रॉम गुड्डी उनकी नतिनी। पोस्टमैन- हनुमान जी। लिफाफा गन्दा हो चुका था। काफी दिन पहले का रखा हुआ होगा। सुनयना ने उन्हें चिठ्ठी समाप्त करता देखकर कहा। ''इसके साथ एक टॉफी भी रखी हुई थी।''

सुरेन्द्र कमरे में बगैर कुछ बोले टहलने लगे। सुनयना भी मौन थी। सोच रही थी कि पति की तरफ से कोई प्रतिक्रिया सुनने को मिले। वे उसकी ओर देखने लगे। अपनी पत्नी से आशा कर रहे थे कि वह उनके मन को शांत करे। सहसा कुछ विचार करके उन्होंने गुड्डी के स्टडी टेबल से उठाए सारे सामान को वापस उनके नियत स्थान पर सहेज कर रख दिया।

मनीष कुमार सिंह

प्रेम की जीत:श्यामल बिहारी महतो

सुबह का समय था। बाहर से मेरे कुछ दोस्त आये हुए थे। कुछ खाने पीने के बाद हम साथ बैठे चाय पी रहे थे। तभी हमने देखा दुखना घर आ गया है। वहीं से मैंने उसे आवाज दी-" अरे दुखना ! "

तब वह पानी पी रहा था।

" आप अरे कह कर बुलाते हैं उसे बुरा नहीं लगता है?"

एक दोस्त ने एतराज जताया।

" उसके जन्म के तीसरे दिन से ही हम सभी उसे इसी नाम से पुकारते-बुलाते हैं। कभी उसने बुरा नहीं माना।

" तो क्या जन्म के बाद ही आपने उसका यह नाम करण कर दिया था?"

" हां, उसके जन्म के तीसरे दिन ही यह नाम रखा गया था। तब से वह इसी नाम से जाना जाता है !"

" कहां गया-आया नहीं ...?"

" आ जायेगा अभी वह कुछ खा रहा है!"

" अपने बेटे का इस तरह का नाम सुनकर उसकी मां को बुरा नहीं लगता वो आपत्ति नहीं करती है?

" अब वह इस दुनिया में नहीं रही !"

" ओह! जान कर बहुत दुःख हुआ, हमें मालूम नहीं था "दूसरे ने अफसोस जाहिर किया था।

" कायल रथलाल घार छठियारी लागो! " गांव की ठकुराइन दीदी सहसा आंगन में टपक पड़ी

" अबकी क्या हुआ दीदी ..?" मैंने जानना चाहा

" आर कि हतअ ! फेर बेटिये भेलअ तो !"

लगा बेटी होने से ठकुराइन दीदी भी खुश नहीं थी। बहुत मिलने की उम्मीद खत्म हो गई थी।

उसके जाते रविदास टोला का रति रविदास पहुंच गया। प्रणाम कर बगल कोने में खड़ा हो गया।

" क्या बात है ? सुबह सुबह...!"

" फिर दोनों बचवन के स्कूल में नाम कयट गेलअ...!"

" काहे कटा...? पिछली बार हमने कहा था न कि समय पर महिना पैसा जमा कर देना। .! फिर...?"

" कुआं में काम करल हलिये -तीन महीना से पैसे नाय देल है कि करबअ ...!"

" कितना लगेगा ...?"

" दोनों के सतरह सौ...!"

" आगे से कटना नाय चाही फिर हमरे पास मत आना- लो जाओ..!"

पांव छू प्रणाम कर रति चला गया। यह देख एक दोस्त का माथा चकरा गया। बोला -" इन लोगों का भी आपके पास आना होता है .?"

" इन लोगों से क्या मतलब है आपका? अरे ये भी इंसान है। इसे भी समाज में पूरा पूरा जीने का हक है!"

" फिर भी ऐसे लोगों को अपने से दूर ही रखना चाहिए...!"

" मैं जाती भेद को नहीं मानता हूं, आपको पता है...!" मैं थोड़ा गंभीर हो उठा था-" दुखना की मां मरी थी तब यही लोग सबसे पहले मेरे घर पहुंचे थे..। भाई ने बताया था। "

" फिर भी ...!"

" दुखना की मां को गुजरे कितने साल हो गए ?" तीसरे दोस्त ने दुखना की मां से फिर जोड दिया था।

" चार साल बीत चुका है,पांचवां साल चल रहा है...!"

तभी भाई ने आकर पूछा-" खसिया बेचेंगे? रमजान मियां बाहर खड़ा पूछ रहा है !"

" साढ़े आठ हजार देगा तो बोलो शाम को मिलेगा ? अभी बाहर से कुछ दोस्त लोग पधारे हैं। । "

भाई चला गया तो एक दोस्त बोला-

" आप दूसरी शादी क्यों नहीं कर लेते हैं? अभी आपकी उम्र ही क्या हुई है। चालीस में भी चौंतीस के लगते हैं-गबरू जवान है! खूब सूरत है! पचीस-तीस की कोई भी लड़की आप पर फिदा हो सकती है ! कहें तो मैं खोज शुरू कर दूं ! "

" बाबूजी, आप लोग नहा धोकर खाना खायेंगे या ऐसे ही, खाना बनकर रेड्डी है ?" पायल बेटी ने आकर पूछा।

" मैं तो नहा-धो लिया हूं बेटे, और चाचा लोग भी नहाये से लग रहें हैं ....!"

" हां हां हम दोनों भी फ्रेस होकर ही घर से निकले हैं -बाकी खाना खा लेगें ...!" तीसरे ने कहा

" ऐसा करो, थोड़ी देर बाद खाना लगा देना... ठीक है!"

" ठीक है बाबूजी...!" पायल चली गई तो दूसरे ने कहना शुरू किया-" मैं कह रहा था कि, दोनों बेटी बड़ी हो रही है। कल इसकी शादी बिहा हो जाएगी तो दोनों अपने अपने घर चली जाएंगी। बडा बेटा अभी बाहर पढ़ रहा है, जाहिर है इंजीनियरिंग कर लेने के बाद वो भी घर में बैठा नहीं रहेगा। कहीं न कहीं नौकरी लग ही जाएगी उसे। उस हालत में आप तो बिल्कुल अकेले हो जाएंगे। तब यह घर भांय भांय लगने लगेगी। भोजन पानी में भी परेशानी। आपकी शादी कर लेने में कोई बुराई नहीं है ..!"

" मैं इसकी बात से सहमत हूं। एक उम्र होती है। अभी सब कुछ आपके पक्ष में है। समय निकल जाने के बाद लोग बहुत तरह के सवाल उठाने लगते हैं ..!"

"" वैसे दुखना की मां को हुआ क्या था...?"

" बुढापा...! " मैंने मुस्कराते हुए कहा।

" हम कुछ समझे नहीं !" दोनों एक साथ बोल उठे थे।

मैंने कहना जारी रखा " जब मैने उसे घर लाया था तो भरपूर जवान थी – एकदम सिलसिल बाछी ! और बहुत गुस्सेल भी। पर मैं उसे बहुत चाहता था। वो भी यहां आकर बेहद खुश थी। देखते देखते उसने मेरे घर में खुशियों की एक संसार बसा ली। परन्तु मन की बड़ी स्वाभिमानी थी।बाहर देह पर हाथ तक रखने नहीं देती थी लेकिन घर आते ही पूर्ण समर्पित ! अपने बच्चों के प्रति उनका स्नेह और लगाव भी बेजोड़ था। हर हमेशा उन सबको अंकवारे चलती। पुचकारते-चाटते चुमते चलती। कभी अपनों से उन सबको अलग होने नहीं देती थी। लेकिन मुझे जरूरत के समय ही सटने देती-पकडने-छूने देती थी। एक बात और उसे आवारा कुत्तों से सख्त नफरत थी। कभी सामने आ जाते तो वो उस पर ऐसे झपटती मानो कूट कर रख देगी , बेटा -बेटी सब तो उसे मिल गया था। पर वह परिवार नियोजन के पक्ष में कभी नहीं रही। तभी वो दिन आ गए और दुखना के जन्म के बाद वह बीमार पड़ गई। हमने प्रखंड के बड़े डॉक्टर को बुलाए। वह आये भी। देखते ही कहा -" यह काफी कमजोर हो गई है।" और उसने कुछ दवाएं लिखीं,दो सूई लगाई और तीन फाइल सीरप लिख कर बोले " इसे मंगा कर घंटा-घंटा के अंतराल में तीनों फाइल सीरप पिला दीजिए....!"

" एक ही दिन में तीन फाइल सीरप....?" दूसरे ने आश्चर्य व्यक्त किया तो मैंने कहा-" मेरा भी यही सवाल था ..!" तब डॉक्टर ने कहा-" इसके शरीर में हिमोग्लोबिन की घोर कमी हो गई है।बच्चा होने के बाद और कमजोर हो गई है.!सीरप से शरीर में खून की मात्रा बढ़ जाएगी और यह धीरे धीरे ठीक होने लगेगी।""

" फिर क्या हुआ...?" तीसरे ने आंगन की और देखते हुए कहा।

" दवा मंगा कर मैंने वही किया जो डॉक्टर ने कहा। सीरप पिला दी और मैं धनबाद चला गया। भाई को बोल रखा कि वो इस पर ध्यान रखे। मैं रात को लौट न सका। भाई रात नौ बजे फोन किया" दुखना की मां अब नहीं रही। " मैं रात को ही घर लौट आता पर। उस दिन सुबह से जो बारिश शुरू हुई वो रात भर बंद नहीं हुई। दोस्तों ने भारी बारिश में घर लौटने से मना कर दिया। मैंने भाई से कहा-" अब जो होना था वो तो हो गया। सुबह सब जुगाड कर रखना। मैं समय पर पहुंच जाऊंगा...!"

इसी बीच

बेटी पायल ने खाने के लिए फिर आवाज लगा दी।

" अब चलो खा ही लेते है ...!" हम चारों खाने बैठ गये।

खाने के बाद मैंने दुखना को फिर आवाज दी -" दुखना अरे वो दुखना ..." इस बार दुखना दौड़ा चला आया।

" आपने पहले भी " दुखना " बोल के आवाज दी थी तब भी वह नहीं आया था !" तीसरे ने कहा-" इस बार भी नहीं आया ? उसकी जगह यह बछड़ा दौड़ा चला आया है। हम दुखना से मिलना चाहते हैं। उसको बुलाइए न ..!"

" यही तो हमारा दुखना है ! " और मैं दुखना के गले को सहलाने लगा !

" क्या...? यही वो दुखना है ? " दोनों मित्र एक साथ उछल पड़े थे !

" मतलब इस बछड़े का नाम दुखना है ?

" और जो आपने हमें कहानी सुनाई वो गाय इस दुखना की मां थी ? "

" अभी तक आप हमें इसी बछड़े की मां की कहानी सुना रहे थे " तीसरा का ताज्जूब भरा स्वर फूटा।

" हम तो समझ रहे थे आप हमें अपनी पत्नी के बारे में बता रहे हैं ... गजब ! मैं अचंभित हूं ! आपके इस मनोभाव विधा देखकर ! फिर पायल की मां कहां है....?"

" पायल बेटे, मां को भेजो ...!' मैंने आवाज़ दी

" यह सब दुखना को दे दो ..कब से मेरा मुंह ताक रहा है ।" आने पर मैंने पत्नी से कहा।

सभी बचा खुचा खाना एक गमले में दुखना के आगे डाल दिया गया। वह मजे से खाने लगा...!

" जब एक जानवर के प्रति आपका इतना प्रेम है तो रति रविदास तो फिर भी आदमी है " पहली बार एक दोस्त ने मुंह खोला था। वह अब भी दुखना को अजूबे प्राणी के रूप में देख रहा था।

"" मुझे तो यह एक अविस्मरणीय जानवर मालूम पड़ता है " दूसरा बोला था।

" मैं तो अभी भी आश्चर्यचकित हूं। एक जानवर जिसे अपना नाम मालूम है। और पुकार सुनकर वह दौड़ा चला आता है। प्रेम और स्नेह का अद्भुत नजारा !"

" जानवर मुंह से कुछ बोल नहीं सकता है पर प्रेम की परिभाषा वो समझता है। अपनी भाव-भंगिमाओं से वह अपनी खुशी और दुःख को व्यक्त कर देता है !"

इस बीच दुखना खाना समाप्त कर। मेरे पास आया और मेरा

हाथ चाटने लगा। उसका भाव बता रहा था और वह कहना चाहता था कि अगर आप न होते तो आज हम जीवित नहीं होते। तीनों दोस्त जल्दी जल्दी अपने मोबाइल से हम दोनों का फोटो शूट करने लगे थे।

श्यामल बिहारी महतो

झारखंड

बेफिक्रः डॉ0 मृत्युंजय कोईरी

शहर के नामी बिजनेसमैन प्रताप कुमार की इकलौती बेटी खुशबू का पहला जन्मदिन है। जन्मदिन पर खुशबू के माता-पिता भव्य पार्टी का आयोजन करते हैं। पार्टी में करीबी मेहमान और दोस्त उपस्थित होते हैं। पार्टी रात के दस बजे तक चलती है। मेहमान खुशबू के लिए उपहार स्वरूप खिलौना, कपड़ा और सोना-चाँदी आदि भेंट करते हैं।

पार्टी के समाप्त होते ही खुशबू की माँ, फूआ, मामी और मौसी हॉल में बैठकर गिफ्ट को खोल-खोलकर देख रहे हैं। खुशबू भी गिफ्ट के पेपर में खेल रही है। खुशबू की माँ सोना-चाँदी को हाथ में उठाकर कहती है, ‘‘ये सोना कितना अच्छा है। खुशबू पर बहुत अच्छा लगेगा।’’

‘‘वाह! बहुत अच्छा है।’’ बुआ

‘‘आपका वाला तो बहुत ही खूबसूरत है दीदी।’’ माँ

‘‘हाँ, मैंने खुद खुशबू के वास्ते खरीदने गयी थी।’’ बुआ

‘‘सही में दीदी, बहुत ही सुन्दर है।’’ मामी

‘‘भाभी, आपका वाला सोना का चैन खुशबू पर बहुत खिल रहा है।’’ माँ

‘‘हाँ, मेरी पसंद की है।’’ मामी

‘‘वाकई, आपकी पसंद बहुत अच्छी है भाभी।’’ मौसी

‘‘हाँ, हाँ, मेरी पसंद ही है ऐसी।’’ मामी

सभी जेवर और खिलौने की तारीफ करते इस कदर व्यस्त हो गये कि खुशबू कब इनके सामने से दूर चली गयी। इसका पता ही नहीं चला। दो बजे रात को जब सारे गिफ्ट देखने के बात खुशबू की माँ सोने से पहले पानी पीने के वास्ते किचन चली जाती है। तब देखती है कि खुशबू पानी से भरा एक बाल्टी में डूबी हुई है। खुशबू की माँ चिल्ला उठी, ‘‘खुशबू! खुशबू!’’

खुशबू की माँ की आवाज सुनकर सभी किचन पहुँच जाते हैं। खुशबू की बुआ बोली, ‘‘क्या हुआ खुशबू को?’’

‘‘हाँ! हाँ! क्या हुआ खुशबू को? अभी तो हम सब के बीच खेल रही थी।’’ मामी

खुशबू की माँ बाल्टी से उठाकर छाती में लगाकर रो रही है। उनकी मामी गीला कपड़ा उतार रही है। तब तक खुशबू के पापा प्रताप कुमार भी पहुँच जाता है। पीछे-पीछे मामा, फूफा और बाकी मेहमान भी पहुँच जाते हैं। खुशबू की माँ दूध पीलाने की कोशिश करती है। लेकिन खुशबू दूध पीती है न रोती ही है। तभी खुशबू के मामा कहता है, ‘‘जल्दी चलिए! खुशबू की स्थिति काफी खराब है। हॉस्पिटल लेकर जाना होगा।’’

‘‘हाँ! हाँ! आपने ठीक कहा।’’ कहते कार की चाबी पकड़कर खुशबू के पिताजी कार की ओर चले जाते हैं। कार में खुशबू की माँ, दादी, मामी और फूफा बैठकर चले जाते हैं। साथ ही खुशबू के मामा और फूफा भी अपनी-अपनी कार निकाल लेते हैं। बाकी मेहमान और घर के सदस्य भी दोनों कार में बैठकर हॉस्पिटल के लिए रवाना हो जाते हैं। हॉस्पीटल पहुँचकर आनन-फानन में इमरजेंसी वार्ड में भर्ती कराते हैं। डॉक्टर साहब फौरन चेकअप करने लगते हैं। पन्द्रह-बीस मिनट तक चेकअप करने के बाद वार्ड से निकलकर कहते हैं, ‘‘आई एम सॉरी! बच्ची मर चुकी है।’’

‘‘नहीं, नहीं, डॉक्टर साहब, मेरी बेटी जिंदा है। खुशबू अपनी माँ को अकेली छोड़कर कहीं नहीं जा सकती है। आप अच्छे से चेकअप कीजिए न डॉक्टर साहब!’’ खुशबू की माँ कहती रो रही है।

‘‘सॉरी मैम, मैंने अच्छे से चेकअप करने के बाद ही कह रहा हूँ।’’ डॉक्टर

‘‘डॉक्टर साहब फिर से एक बार अच्छे से चेकअप कर लीजिए न! जितना खर्च होगा। मैं करने के लिए तैयार हूँ।’’ खुशबू के पापाक

‘‘सॉरी सर, बच्ची का शरीर बर्फ बन चुका है। लगभग दो-तीन घंटे पहले ही मर चुकी है। मुझे जाने दीजिए! दूसरे वार्ड में भी इमरजेंसी केस है।’’ डॉक्टर साहब

खुशबू की माँ हॉस्पिटल में ही रोते-रोते बेहोश हो गयी। अब तो वही कहावत हुई। अब पछताए होत क्या? जब चिड़ियाँ चुग गई खेत।

डॉ मृत्युंजय कोईरी झारखंड

कहानीः बूँद बूँद ज़हर पिया, पिया के नामः देवी नागरानी

जिंदगी ने जो कुछ भी मुझे दिया वह मिट्टी सम्मान था. पर मेरी तकदीर मेरे हाथों में थी, उसी हौसले पर मैंने मट्टी को सोना बनाया.

जो जिंदगी मुझे मिली वह मौत से भी बदतर. मौत के पहले मरने का अहसास. हर वक्त उसके साथ मुलाकात ने मेरे दर्द को रफूचक्कर कर दिया. जिसके पास अपना कहने के लिए कुछ भी न हो, उसे मिट जाने का कैसा डर? उस निडरता की डगर पर कदम दर कदम चलते हुए जो हिम्मत और हौसला मैंने अपने अंदर पाया, दुनिया और दुनियादारी से जो तजुर्बा हासिल किया, वही मैं आज अपने शब्दों में अभिव्यक्त कर रही हूँ.

रात के समय औरतों के लिए स्थापित की हुई संस्था में अशिक्षित औरतों को शिक्षा की रोशिनी प्रदान की जाती. उनके अहसासों को जगाया जाता, ताकि वे अपने होने के अहसास और इस जीवन के मकसद को समझ सके. मैंने उनके भीतर हालातों से हार न मानने का हौसला, संघर्ष का जज्बा और आत्मविश्वास के अंकुर बोने की कोशिश की. विश्वास का तत्व ‘कि मैं जैसी भी हूँ, अगर किसी से बेहतर नहीं हूँ तो कमतर भी नहीं. अपना मूल्य खुद आंकना है. समय के विरुद्ध युद्ध हारकर अपने जीवन की बागडौर किसी और के हाथ में सौंपना कायरता है. संघर्ष के पहले ही हार मानने वाली बात है. फिर सामने चाहे कोई अपना अज़ीज़ क्यों न हो. पति, घर बार, परिवार की परिभाषा जहां मिथ्या लगे तो समझना चाहिए कि रिश्तो में स्वार्थ के सिवा कुछ नहीं बचा है.

नारी पति को परमात्मा का दर्जा देती है, घर की चौखट को मंदिर का स्थान देती है और अटूट विश्वास के साथ अपना जीवन घर व् घरवाले के हवाले कर देती है. यह कोई फतह पाने की बात नहीं. अपने मतलब को पाने के लिए घर का सरताज, हैसियत की ग़लतफ़हमी के बलबूते पर नारी को कमजोर समझ कर उस पर दबाव डाले, अपनी मर्दानगी का ज़ोर आजमाए, यह मर्दानगी नहीं सरासर कायरता है.

शादी को एक साल हुआ है, पर ऐसा कभी नहीं हुआ जो आज हुआ. स्वरूप काम से जब घर आया तो उसके साथ दो मर्द और दो औरतें साथ थीं. मैंने सोचा साथ काम करने वाले सहयोगी दोस्त होंगे और ये शायद उनकी पत्नियां. मेहमान नवाजी की रस्म अदा करते हुए मैंने उनका स्वागत करते हुए पापड़-पानी उनके सामने रखते हुए चाय के लिए रसोईघर की ओर मुड़ी तो पति स्वरूप ने उनकी तरफ से एक फरमाइश पेश की-

‘‘रूप कुछ पकोड़े तलकर ले आती तो पीने का मज़ा दुगना हो जाता.’

मैं मन ही मन में विचलित हो उठी. मैंने इससे पहले स्वरूप में आज जैसे आसार नहीं देखे थे.

‘ अरे यार तुम्हारी पत्नी तो बहुत सुंदर है और रसीली भी.’

उन दोनों मर्दों में से एक ने ठहाका मारते हुए कहा. उसके मोटे-मोटे भद्दे होंठ जब कहने के लिए खुले तो उनमें से झलक रहे दांतों के पीले दाग यूं लगे जैसे कोई मगरमच्छ पानी में तैरती किसी मछली को अपना शिकार बनाने की खुशी से चहक उठा हो.

रसोईघर की ओर जाते मैं सरापा डर सी गई. यह क्या? स्वरूप का रूप ही आज बदला हुआ लग रहा था. मेरे साथ यह उसकी दूसरी शादी है. पहली पत्नी गुजर गई थी. बाल बच्चा न था. मैं स्वरूप की ऑफिस के सामने एक स्कूल मैं लाइब्रेरी इंचार्ज थी. उम्र 32 साल, कंवारी, अपने काम से काम रखने वाली, अकेली किराये के माकन में रहती थी. जिस दिन स्वरूप मुझे स्कूल के बाहर निकलते देखकर मेरे पास आया और अपना परिचय देते हुए कहा-’ रूपा जी, मेरा नाम स्वरूप है. मैं ऑफिस में असिस्टेंट मैनेजर हूँ. तुम्हें हर रोज़ इसी समय स्कूल से निकल कर बस में चढ़ते देखता हूँ.’ ऐसा कहते हुए उसने हाथ की उंगली से अपनी ऑफिस की ओर इशारा किया.

मैं हैरान हुई. उससे पहले मेरे साथ कभी ऐसा कुछ हुआ नहीं था कि कोई मर्द बीच राह में मुझे रोककर मुझसे बतियाने की कोशिश करे. पर मन ही मन उसकी मर्दानगी पर नाज़ हुआ और उसकी हिम्मत की दाद भी देनी पड़ी, इस तरह राह चलती नारी को रोककर बतियाने के लिए.

‘ आपने मेरा नाम कैसे जाना?’

‘ तुम कहो! वैसे जिसमें चाह होती है उसके बारे में बहुत कुछ जानने के लिए मन मचल उठता है. मैं तुम्हारे साथ के लिए बहुत लालायित हूँ, तुम्हारे साथ दोस्ती करना चाहता हूँ.’

वह बिना सांस लिए सब कुछ एक साथ कह गया, बिना इस बात की परवाह किये कि वह रस्ते पर खड़ा है. हम दोनों बस स्टॉप के करीब आ पहुंचे थे. दूर से आती मेरी बस को आते देखकर मैं उसके रुकने पर उसमें सवार हुई और चढ़ते ही अपना हाथ हिलाकर उसे बाय किया. एक पल के लिए मुझे खुद पर भी हैरानी हुई कि ऐसा मैंने किस जज्बे की तहत किया. शायद यही कुदरती कशिश है एक स्त्री की एक पुरुष की ओर…. और उस में कुछ गैर वाजिब भी नहीं लगा.

दूसरे दिन 5:00 बजे स्कूल से निकलते मेरी आंखें खुद-ब-खुद सामने की ओर चली गई जहाँ स्वरूप शायद मेरे ही इंतजार में खड़ा था. आगे बढ़ते हुए उसने मेरी आँखों में झांकते हुए कहा-

‘ तुमने कुछ सोचा उस बारे में?’

‘ किस बारे में?’

‘हमारी दोस्ती के बारे में, हमारे साथ के बारे में, हमारे भविष्य के बारे में. तुम अगर हामी भरो और साथ दो तो मैं तुम्हें वह सब कुछ दूंगा जो एक पति अपनी पत्नी को देता है. मेरी पहली पत्नी के बाद मैं अकेला पड़ गया हूँ. तुम चाहो तो शादी के बाद नौकरी कर सकती हो, न चाहने पर छोड़ भी सकती हो. मैं अच्छा खासा कमा लेता हूँ, जिससे हमारी घर गृहस्ती ठीक से चल सकेगी.’

स्वरूप को जैसे ब्रेक लग गई. कारण मेरी हंसी थी, जो रुकने का नाम नहीं ले रही थी. मैं पेट पकड़कर हंसते-हंसते झुकती चली गई, और वह आश्चर्य से मेरी ओर ऐसे देखता रहा जैसे कोई कारण ढूंढ रहा हो.

‘ क्या हुआ?’

‘ सब कुछ हो गया, बाकी बचा नहीं रोया!’

अब स्वरूप के हंसने की बारी थी. हंसते-हंसते वह भी अपने पेट को पकड़कर हंसी रोकने का प्रयास करता रहा. फिर एकदम शांत होकर, गीली आंखों से मेरी ओर देखते हुए मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया और कहा-’ तो मैं क्या समझूं?’

कुछ न कहकर मैंने अपनी हंसी पर काबू पाते हुए उसकी आँखों में देखा और फिर नज़र झुकाते हुए अपना हाथ उसके हाथ से अलग किया. इसी को वह मेरी हामी समझ बैठा. बस मुस्कुराते हुए कहने लगा- ‘थैंक्यू फॉर गिविंग मी योर कंसेंट.’

मैं जैसे बेहोशी से होश में आई.

‘अगले शनिवार को हम कोर्ट मैरिज कर लेंगे. तुम अपनी एक दो सहेलियों को ले आना मैं भी अपने कुछ दोस्तों को साथ लाऊंगा.’

सच में आने वाले शनिवार के दिन हमारी कानूनन कोर्ट मैरिज हुई और हम पति पत्नी ऐलान कर दिए गए. रवायती तौर हमने एक दूसरे के गले में फूलों की मालाएं पहनाईं. रेगिस्टर पर उसके और मेरे दोस्तों के सामने हम दोनों ने हस्ताक्षर किये, रजिस्ट्रार ने मुस्कराते हुए हमें बधाई दी. तद पश्चात मैंने स्वरुप को और उसने मुझे हाथ पर दबाव डालते हुए बधाई दी. उसके बाद हम उन दोस्तों के साथ एक होटल में खाना खाकर, खुशी-खुशी सैर-सपाटा करके रात 11:00 बजे उस घर में पहुंचे जहां स्वरूप रहता था.

घर बहुत बड़ा तो न था, पर दो लोगों के गुजर करने के लिए छोटा भी नहीं था. एक बड़ा बेडरूम, एक हॉल और रसोई घर, बाथरूम और वे सब सुविधाएं जो एक घर में होनी चाहिए.

शादी की पहली रात गुजरी. हम दोनों ने दस दिन के लिए अपनी अपनी छुट्टियां मंजूर करवा लीं, गोवा चले गए. नशीला वातावरण, हरसूं हरियाली, सामने समुद्र जिसमें चढ़ती उतरती लहरें कभी-कभी किनारों से टकराकर शोर मचाती हुई लौट जाती, कभी आगे बढ़कर हमारे पाँव को ठंडक पहुंचा जातीं.

मेरा मन भी कुछ उन्हीं लहरों की तरह हिचकौले खाता, कभी अपने उठाये क़दम पर विश्वास व् अविश्वास की पुल पार करता हुआ उस ठंडक का आनंद लेता, तो कभी इस रिश्ते की गहराई को मापने की कोशिश करता. यह सब इतना जल्दी हुआ कि फैसला करने के लिए वक़्त ही नहीं मिला फिर भी सब कुछ सम्पूर्ण हो गया.

और अब वह मेरा पति है और मैं उसकी पत्नी. गोवा में हम दोनों साथ-साथ खूब घूमते हुए वातावरण का, एक दूसरे के

साथ का आनंद लेते रहे. नारियल का पानी रोज़ पीते रहे. एक दिन स्वरूप में मुझे अपनी कसम देकर ताड़ी पिला दी. दूसरी बार ताड़ी में कुछ मिलाकर वही क़सम देते हुए मुझे पिलाया. जहर पीने का यह मेरा पहला घूँट था.

एक दिन सिगरेट का कश लेते लेते मेरी ओर सिगरेट बढ़ाते हुए स्वरूप ने कहा-' एक कश ले लो, फिर देखना कितना मज़ा आता है?'

मैं चौंकी-' यह कैसा पति है जो अपनी नवविवाहिता पत्नी को इन अनचाही वस्तुओं से वफिफ करा रहा है. पर था तो मेरा पति, इस नाते उस रिश्ते पर विश्वास बना रहा.

एक बार से उसे मुझे फिर से ताड़ी पीने की ज़िद की. मेरे 'ना' कहने पर उसके चेहरे का स्वरुप कुछ बदल गया, मुस्कुराकर बात को दूसरी दिशा में ले गया. पता नहीं क्यों मेरे मन में एक अनचाहा अहसास भर गया, जिसमें छिपा हुआ था डर, अविश्वास, और न जाने क्या-क्या! मैं खुद अनजान थी कि ऐसे विचार मेरे मन में क्यों उत्पन्न हो रहे हैं?'

खैर हंसी-ख़ुशी आठ दिन बीत गए, लौटकर घर आए. मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक. फिर वही स्कूल वही ऑफिस, वही घर और चूल्हा-चौका. यूँ ही छः माह गुज़र गए. बाहरी तौर पर सब ठीक-ठाक चल रहा था, पर मन में कही न कही एक अस्थिरता घर कर गई. कहते हैं कि फर्स्ट इंप्रेशन आखिरी इंप्रेशन होता है. वह कहीं भी लागू नहीं हो रही थी. हम फकत रात का खाना साथ-साथ खाते थे, दिन को दोनों की दिनचर्या अपने-अपने समय अनुसार व् सुविधा अनुसार हुआ करती. कभी-कभी स्वरुप रात को घर लौटकर कहता-' मैं खाना खाकर आया हूँ, तुम खा लो.'

मन में सोचती, यह कहाँ के रिवायत का हुकुमनामा है कि खाने का इंतजार करने के बाद आकर यह सज़ा सुनायी जाय, बिना किसी जायज़ कारण के. फिर ऐसा अक्सर होने लगा, और मैंने ज़हर का दूसरा घूंट पी लिया.

एक बार मैं स्कूल से घर लौटी. अक्सर स्वरूप मुझसे आधा घंटा बाद घर पहुंचता. पर उस दिन वह घर पर बैठा, सिगरेट फूंके जा रहा था. कहीं जाने को तैयार बैठा था, कपड़े भी अच्छे पहन रखे थे, इत्र की महक सारे कमरे में फैली हुई थी. "मैं बाहर जा रहा हूँ. रात को शायद मैं न लौट पाऊं, तुम सो जाना. सुबह मिलते है.'

यह ज़हर का तीसरा घूँट था जो मैंने पी लिया!

हल्की से कड़वाहट ने मेरे लबों को लगभग सी लिया था.

मैंने स्वरूप का रूप देखा था, पर अब लगा उसे जानने लगी थी. यह तो कोई और ही शख्स था, जो उस शख्स में छुपा हुआ बैठा था, जिसकी हर एक परत उतरते ही उसकी शख्सियत मेरे सामने एक नए रूप में जाहिर होती.

ऐसा करते-करते शादी को 11 महीने गुजरे. अब तो यह रोज का अनचाहा सिलसिला बनता गया. या तो वह घर आकर पूरी तरह से बन संवर कर फिर जाता, या खाना खाए बगैर ही सो जाता. मतलब कुछ भी नॉर्मल सा लगे, ऐसा नहीं था. और इस हकीकत ने मेरी जिंदगी की नींव को हिलाने में कोई कसर नहीं छोड़ी.

क्या करूं, इसके साथ अपना दर्द बांटूं. मन में उथल-पुथल मची हुई रहती. शाम को घर लौटती, खाना पका कर उसके आने का इंतजार करती. बहुत देर के बाद वह खाना फ्रिज में रखकर सोने की कोशिश करती. एक साल पूरा होने के पहले ही खाना पकाने की मेरी चाह कम होते होते, न के बराबर हो गई. कोई खाने वाला भी तो हो जिसके लिए कुछ बनाऊं, पर बनाकर वही खाना फ्रिज में रखूँ, तो किसलिए और किसके लिए?

0

'पकोड़े तैयार है क्या?' स्वरूप रसोई घर के बाहर से स्वरुप की आवाज आई

' हां'

' तो बाहर लेकर आओ और सबके साथ आकर बैठो.' ऐसा कहते हुए स्वरूप में एक ठहाका लगाया. ठहाके में न जाने क्या था कि मेरा खून खौल उठा. कुछ लोगों के लिए बेशरमी की हदें पार करना भी एक आदत होती है. वही जो शर्म की सीमाओं को उलांघने की जुर्रत जानबूझ कर किया करते हैं. आज मैंने ज़हर का चौथा घूंट पिया जिसमें कसैलापन, पहली तीन घूंटों से अधिक था.

'अरे रूपा जी, बाहर आइए, हमसे क्या पर्दा.' एक दोस्त ने वहीं से जोरदार आवाज़ में कहा.

' हमारे बीच में कोई पर्दा नहीं, औरतों और मर्दों के बीच भी नहीं' यह दूसरा मर्द था जिसने पहले वाले की अफज़ाई की.

कड़ाई में खौलते घी की गर्मी से अधिक मेरे भीतर की आग की तपिश थी, लगा मेरे भीतर का खून उबल कर बाहर उफान की तरह उमड़ रहा था. अगर सभी कुछ यूँ जल जाना है

तो बाकी क्या बचेगा? उस समय मैं अपना मन रसोई के काम में लगाये रखना चाहती थी. दो-तीन बार स्वरूप ने आवाज़ लगाई –‘ रूप, आओ आकर हमारे साथ बैठो तो सही’, पर न जाने मेरे अंदर में कहाँ से गर्मी का उबाल आया जो मैंने रसोई घर से जोश भरी आवाज में कहा- ’एक बार कहा नहीं, तो नहीं! अब फिर कह रही हूँ कि मैं आप सबके साथ बैठकर न खाऊंगी, न पियूंगी और न ही बैठकर बात करूंगी. आपको जो करना है वो कीजिए. मुझे फिर से आने के लिए आवाज़ मत दीजिये.”

मेरी आवाज़ में न जाने कैसी बिजली की गड़गड़ाहट थी, जिसको सुनने के बाद उन्होंने मुझे बाहर आने के लिए आवाज़ ही नहीं दी.

0

मेरी आवाज मैं अभी तक कल वाली गर्मी बाकी रही. गायत्री भवन की महिलाओं को यह बदलाव् बखूबी नज़र आया और उन्होंने अपने अपने ढंग से अपना रवैया ज़ाहिर किया. एक ने कहा-’ अरे दीदी यह जो नया सबक आपने हमें याद करने के लिए दिया वह तो बहुत मुश्किल है. याद ही नहीं पड़ता.’

‘ क्या मुश्किल है उसमें?’ मैंने फिर उसी कड़वे लहज़े में पूछा.

‘ यह राम की पत्नी सीता, रावण के पास रातभर रहकर लौटी, फिर अग्नि परीक्षा और न जाने क्या-क्या लिखा है रामायण के इस पाठ में.’ पात्र बहुत है, नाम बहुत है, याद करने इतने आसान नहीं. और एक धोबी की पत्नी का प्रसंग है कि उसकी पत्नी एक दिन घर नहीं आई तो दूसरे दिन धोबी ने उसे घर में आने नहीं दिया यह कहकर कि-’ मैं कोई रामचंद्र तो नहीं हूं जो सीता का रावण की वाटिका से लौटने बाद भी उसे घर में रहने दूं.’

‘अरे पगली बैठो तो तुम्हें समझाऊं. तुम जो सुबह से रात तक अपने घर में काम करती हो, बच्चों को स्कूल भेजती हो लौटने का इंतजार करती हो, पति को समय पर जरूरत की हर चीज़ देती हो, क्या यह सब तुम याद करती हो. यह सब सहज सहज अपने आप हो जाता है, सिर्फ करने की निस्वार्थ भावना चाहिए. जब जब स्त्री की मानहानि होती है या उसके स्वाभिमान को ठेस पहुंचती है, तब ही यह रामायण महाभारत शुरु होता है.’ मन के मंथन कि उपजी बात जबान पर आ ही गयी, ऐसा मुझे लगा.

‘दीदी रावण दस सिरों वाला था क्या?’

‘हाँ, यह सच है, रोज़ न जाने कितने रावण नकाबों के मुखौटों के पीछे छुपे समाज में घूम रहे हैं. जिनकी करनी कुछ होती है और कथनी कुछ और’. मैंने औरतों को समझाते हुए उसी कडवाहट भरी आवाज़ में कहा.

‘अच्छा दीदी अब समझ में आ गया’- यह कहकर वे सभी अपने अपने पथ को याद करने में व्यस्त हो गई.

मैं अपनी सोच की जंजीरों से खुद को आज़ाद करने कराने की कोशिश में अपने अतीत से बाहर निकलकर वर्तमान में आयी.

0

उस रात 2:00 बजे तक ऊपर के कमरे से दो मर्द और दो औरतों की आवाजें, अनुपयोगी मजाक, भद्दे शब्द मैंने अपने घर में सुने, यह मेरा पहला अनुभव था.

मन में एक निर्णय लिया. 8:00 बजे स्वरूप तैयार होकर ऑफिस के लिए निकला और मैं भी 9:00 बजे निकली. फकत उस घर से ही नहीं, उस ज़िंदगी के बीहड़ से जब निकली तो फिर पीछे मुड़कर नहीं देखा. क्या देखती? क्या था वहां देखने लायक? क्या कुछ था वहां जिसे मैं अपना कहूं. गनीमत यह कि मेरा स्वाभिमान मेरे साथ था. मैंने अपने साथ अपने ज़ेवर, कुछ कपडे और रक़म ली. बाक़ी जो उसका था वहीं छोड़ दिया. दहलीज़ के बाहर आते ही लगा कि मेरे भीतर कुछ था जो टूट गया. मुझे न घर छोड़ने की रंजिश थी, न ही घर के मालिक को छोड़ने की, इतना जरूर जाना मुझे सफ़र में कई समझौते करने पड़ेंगे. एक अफसोस यह भी था कि मैंने उस आदमी को पहचानने में इतनी बड़ी गलती कैसे कर दी ? निर्दोष तो मैंने खुद को भी नहीं माना और खुद के लिए सजा भी मैंने तय की. मैंने उस मौजूदा स्कूल से अपनी इस्तीफा मंजूर करवा कर, पास के छोटे से गांव के एक स्कूल में नौकरी ट्रांसफर करवा ली. बस चार दिन के बाद वहां जाकर काम शुरू किया, गायत्री भवन की महिलाओं को शिक्षा प्रदान करने का काम.

‘ अरे राधा तुम खड़ी हो जाओ, इस विषय के बारे में जो महसूस करती हो वह सभी के सामने कहो.’

राधा उठ खड़ी हुई, पार्वती की ओर देखते हुए कहने लगी-’ पार्वती का पति उसे रात को दारू पीकर बहुत मारता है, और सुबह उठते ही उससे माफी मांग लेता है…

’ यह बहु-रूपी मर्द ही तो रावण होते हैं.’ ऐसा कहकर मैं चुप हो गई. यह मर्द ही है जो हर फैसले का अख्तियार अपने पास रखता है. औरत के अख्तियार तो नाम मात्र के होते है, रीति रिवाजों की बेड़ियों से जकडे हुए. इसी लिए औरतें अपने हक़ के लिए बगावत नहीं कर पातीं. यह बगावत का अख्तियार भी मर्द ने अपने पास रखा है, सिर्फ़ बर्दाश्त का हक़ औरत को दे

दिया है. “पार्वती तुम ऐसी सोच की जंजीरें तोड़ क्यों नहीं देती? मार पीट पर ऐतराज़ जताओ, घर में बगावत करो, उस रावण नाम के मर्द को कभी भी अपनी अहमियत को मत रौंदने देना.” कहते हुए मैंने अपने कमरे में जाने की राह पकड़ी.

0

पंच साल बाद.....

‘रुपा मुझे माफ कर दो’ सुन कर सर उठाया. देखा, मेरे क्लास के सामने भीतर बैठी औरतों के सामने स्वरूप हाथ जोड़कर खड़ा था.

‘ मैंने तुम्हारे साथ ज्यादती की. मैं राह से भटका मुसाफिर तुम्हारे साथ रहते हुए भी खुद को बदल न पाया. आज मैं अपनी की हुई सभी गुस्ताखियों की सजा भुगत रहा हूँ. न मेरी नौकरी रही हैं, न घर, न वे दोस्त जिन्हें मैं अपना कहता था.” कहकर स्वरुप वाकई एक भिखमंगे की तरह आँखों में आंसू लिए विनम्र याचना कर रहा था.

रूप ने उसकी दयनीय हालत देखी और फिर अपना मुंह बेरुखी से मोड़ लिया. उसकी करतूतों ने उसे इस अंजाम तक पहुँचाया था. बस एक नज़र उसके चेहरे पर डालते हुए धीमे से कहा-“रूप तुम अपनी ज़िन्दगी के लिए जो रास्ता चाहो चुन लो, पर मैं कोई सीता नहीं जो इस बनवास के बाद तुम्हारी लंका में फिर से पनाह पाकर अपने विनाश को दावत दूँ. तुम जिस राह से आए हो उसी से लौट जाओ, यही तुम्हारे लिए ठीक है.” कहते हुए मैंने अपने क़दम अपने घर कि ओर मोड़ लिए.

“रूप.....” इसके आगे वह कुछ न कह पाया.

“स्वरूप कभी कभी एक बुझते दीप के सामने सरफिरी हवाएं सर पटक पटक कर दम तोड़ देती हैं. ज़ुल्म और मौत उम्र नहीं देखते. हम सभी कहीं न कहीं हर ज़ुल्म में शरीक हैं. सजा हमें भी मिलनी चाहिए. जो मर्द औरत की अना की रक्षा न कर सके, ऐसे मर्द पर आधारित होने से बेहतर है औरत निराधार ही रहे. मैं इस प्रतिज्ञा को सहृदय स्वीकारते हुए अपनी इस वाटिका में अपना जीवन गुज़ार लूंगी.

‘रूप....मुझे....एक ..मौक़ा....’

‘यह कतई नहीं होगा. विष के मंथन उपरांत जो अमृत पाया है वही मेरे जीवन का निचोड़ है. मैंने जिस राम को अपने मन मंदिर में बिठाया था, उसके भीतर के रावण ने ही उसे मात दी. अब मैं फिर उसे उस पद पर नहीं बिठा सकती. इसी में मेरी अना है, यही मेरा अमल है.’

देवी नागरानी

जन्म: 1941 कराची, सिंध (तब भारत)

लघुकथाःमासूम सवाल :कीर्ती श्रीवास्तव

कोरोना महामारी की वजह से पूरे देश की आर्थिक व्यवस्था गड़-बड़ा गई थी और मैं एक छोटी-सी नौकरी करने वाला साधारण इंसान। इस लॉकडाउन ने परिवार को चलाने का साधन छीन लिया। आज अपने घर की छोटी-सी दुकान जिसमें बिजली के लिए मीटर भी नहीं लगवा पाया था। उसे खोलने की सोच इसकी सफाई के लिए गया। सालों से बंद पड़ी दूकान के शटर को खोल कर उसमें लगे मकड़ी के जाले निकाल ही रहा था कि पास की कॉलोनी से दो छोटे बच्चे जो कोई 8 से 10 साल के होंगे आये और उन्होंने मुझसे पूछा- 'अंकल दुकान खोल रहे हो?'

मैंने कहा- 'हाँ, खोलेंगे।'

उसने फिर पूछा- 'किस चीज की?'

मैंने कहा- 'तुम बताओ, किस चीज की खोलें?'

बड़ी ही मासूमियत से वो दोनों बोले- 'अंकल, किराना की दुकान खोलो।'

मैंने कहा- 'बाजु में तो कितनी बड़ी किराना की दुकान है।'

उस पर बच्ची बोली- 'वहाँ बहुत महंगा सामान मिलता है अंकल।'

यह कहकर वो चली गई और में उसे एक टक जाते देखता रहा।

कीर्ति श्रीवास्तव

242 सर्वधर्म कालोनी, सी-सेक्टर, कोलार रोड,

लघुकथा :'चिन्ता और कारण':नगेन्द्र फौजदार

कार्तिक माह के अन्तिम सप्ताह में जब सूर्यदेव अपना प्रभाव प्रथम पहर के बाद छोड़ते हैं , ऐसी एक भीगी सुबह में श्रीमती रमा द्विवेदी की भेंट अकस्मात् गुलाबी शहर के एक बालोद्यान के सिंहद्वार के सामने बिछी बेंच पर बैठी अवसादग्रस्त श्रीमती कल्पना राय से हुई। घनिष्ठ मित्रता में किसी औपचारिकता का कोई स्थान नहीं होता, यही सोचकर बहुत समय के बाद मिली श्रीमती रमा ने अपनी सहेली की चिन्तित मुख-मुद्रा को भाँपकर सीधा प्रश्न किया- "क्या बात है कल्पना ! है तो किसी बड़ी चिन्ता मे? "

"क्या बताऊँ रमा ! बच्चों की चिन्ता ही मेरी परेशानी का कारण है।"

"अरे ! तुमने लड़की को ससुराल भेज दिया, राकेश और अमित भी 'सैटल्ड' हो गए; फिर भी...!"

श्रीमती कल्पना से कोई प्रत्युत्तर प्राप्त ना हो सका।

कुछ क्षण के लिए मौन ने हठात् अपना स्थान बना लिया था। पास रखी पानी की बोतल को आधा गटकने के बाद श्रीमती राय ने बिखरे-से अतिमन्द स्वर में बोलने का प्रयास किया- "यही तो चिन्ता है कि मेरी सोनिया वहाँ कोई दुख ना पाए और...बहुएँ , मेरे बेटों को 'सैपरेट' घर में रहने के लिए विवश ना कर दें...! "

कहते-कहते कल्पना की मुख-ध्वनि गले में सिमट कर रह गई और मौन ने फिर एक बार अपना कोलाहल शुरू कर दिया। अब पसीने के महीन कण श्रीमती रमा द्विवेदी के चेहरे पर नृत्य करने लगे थे, अन्तर था केवल कारण का। रमा की चिन्ता का विषय, उसकी बीस वर्षीय बेटी के लिए योग्य वर की तलाश का था और बेटों के लिए स्थायी रोज़गार का।

_नगेन्द्र फौजदार

काव्यःगीतःगज़लःकविता

बदल गया है गाँवःधीरज श्रीवास्तव

बदल गये हैं मंजर सारे
बदल गया है गाँव प्रिये!

मोहक ऋतुएँ नहीं रही अब
साथ तुम्हारे चली गई!
आशाएँ भी टूट गईं जब
हाथ तुम्हारे छली गई!
बूढ़ा पीपल वहीं खड़ा पर
नहीं रही वह छाँव प्रिये।

पोर-पोर अंतस का दुखता
दम घुटता पुरवाई में!
रो लेता हूँ खुद से मिलकर
सोच तुम्हें तन्हाई में!
मीठी बोली भी लगती है
कौए की अब काँव प्रिये।

चिट्ठी लाता ले जाता जो
नहीं रहा वह बनवारी!
धीरे-धीरे उजड़ गये सब
बाग-बगीचे फुलवारी!
बैठूँ जाकर पल दो पल मैं
नहीं रही वह ठाँव प्रिये।

पथरीली राहों की ठोकर
जाने कितने झेल लिए!
सारे खेल हृदय से अपने
बारी-बारी खेल लिए!
कदम-कदम पर जग जीता, हम

हार गये हर दाँव प्रिये।

पीड़ा आज चरम पर पहुँची
नदी आँख की भर आई!
दूर तलक है गहन अँधेरा
और जमाना हरजाई!
फिर भी चलता जाता हूँ मैं
भले थके हैं पाँव प्रिये।

---- धीरज श्रीवास्तव

सहारा गीत काःमयंक श्रीवास्तव

याद की परछाइयों का
साथ देने ले लिए
राह में मिल ही गया
हमको सहारा गीत का।

मूक अन्तदृष्टि की
संवेदना का स्वर मिला
कुछ दिनों से बंद फिर से
जुड़ गया है सिलसिला।
यह मधुर सौगात वैसे
तो अचानक मिल गई
मिल रहा किन्तु हमको
स्वाद मीठी जीत का।

दूरियां मजबूरियों का
मेल हो पाया नहीं
यह गनीमत है कि ज्यादा
दर्द गहराया नहीं
हो गई नाकाम सारी
नापने की कोशिशें
हैं गहन रिश्ता अतुल
गहराइयों से प्रीत का

याद की मीठी छुअन का
सुख पुन: मिलने लगा
क्योंकि मुरझाया हुआ
मन फूल फिर खिलने लगा
छटपटाहट ने कबूला
तार रिश्तों का कभी
टूटना संभव नहीं है
आज और अतीत का

मयंक श्रीवास्तव

प्रश्न करने दिन खड़ा थाःसुरजीत मान जलईया सिंह

प्रश्न करने दिन खड़ा था
नींद सन्नाटों ने तोड़ी।
फूटकर रोने लगा मैं
गाँव के व्यवहार पर।

पेड़ से पत्ते गिरे हैं
टहनियों पर फिर हंसे हैं।
हर तरफ जाले घिरे हैं
जुगनू उनमें जा फंसे हैं।
सरसराया काल देखो
जोर करती हैं हवाएं।
बादलों का हाल देखो
हर तरफ काली घटाएं।
साथ छूटा जा रहा है
अब मेरी परछाईं का।
धूप रूंठी जा रही है
छाँव के व्यवहार पर।
फूटकर रोने लगा मैं

गाँव के व्यवहार पर।

बात यूं फैली हुई है
गाँव हंसता है हमीं पर।
आंख क्यों कर नम हुई है
तंज कसती है हमीं पर।
हमने जो भी आस पाली
वो ही है हर बार टूटी।
मन भरम की रात काली
जीने की उम्मीद छूटी।
कोना कोना रो दिया है
घर हमी ने खो दिया है।
घर का ज़र्रा ज़र्रा रोया
ठाँव के व्यवहार पर।
फूटकर रोने लगा मैं
गाँव के व्यवहार पर।

चल रहा हूँ थक गया हूँ
बैठता हूँ भागता हूँ।
स्वयं को कितना नया हूँ
खुद से डरकर जागता हूँ।
लड़ रहे हैं भिड़ रहे हैं
चीखते हैं स्वप्न कितने।
ठोकरों से गिर रहे है
व्यर्थ होते जत्न कितने।
पत्थरों से छिल रहे हैं
पथ निरन्तर पग निरन्तर।
रास्ते रोने लगे हैं
पाँव के व्यवहार पर।
फूटकर रोने लगा मैं
गाँव के व्यवहार पर।

सुरजीत मान जलईया सिंह

जानती हैं लड़कियाँः डॉ अंजु दुआ जैमिनी

जिस रोज ठानती हैं लड़कियाँ
बहुत कुछ जानती हैं लड़कियाँ।

जलाने से पहले दीपक, बाती को
तेल में डुबोना जानती हैं लड़कियाँ।

रोशन चरागों को करने का हुनर
खूब जानती हैं लड़कियाँ।

फकत एक मौके की दरकार
कमाना जानती हैं लड़कियाँ।

खण्डहरों को सँवार कर घर
बनाना जानती हैं लड़कियाँ।

- डॉ अंजु दुआ जैमिनी

कुछ समझ आता नहीं हैः डॉ.रामावतार सागर

कुछ समझ आता नहीं है जिंदगी तेरा लिखा।
एक पल में सुख लिखा था दूसरे में क्या लिखा।
साँस आती और जाती जानते हैं हम मगर,
बस अचानक छूट जाता साँस का आना लिखा।
सूखते से इक शज़र ने ये कहा है आह भर,
तय हुआ था इन बहारों का तो बस जाना लिखा।
रोज उसको सोचता हूँ बस यही मैं सोचकर,
काश पूरा हो कभी तो सोच का मेरा लिखा।
दिन गुजर जाता है मेरा रोज ही बस इस तरह,
सुन लिया उसका रिकॉर्डिंग,पढ़ लिया उसका लिखा।
दूर तक फैली हुई थी राह में वीरानियाँ,
आगे जाना है मना पत्थर पे बस ये था लिखा।
रातभर किस सोच में डूबा है सागर आज भी,
आँख में उसकी किसी ने जैसे जगराता लिखा।

डॉ.रामावतार सागर

पहली कमाई दे जाएः अनिल 'मानव'

असर ये प्यार का मेरे दिखाई दे जाए
बिना कहे ही उसे सब सुनाई दे जाए

लिखो तो सच ही लिखो जो दिखाई दे जाए
कलम को तोड़ दो जिस दिन दुहाई दे जाए

कोई भी नाप नहीं सकता वो खुशी माँ की
जो माँ को बेटा ला पहली कमाई दे जाए

उसे कहें तो भला कैसे हम कहें मज़हब
हमें-तुम्हें जो सभी को बुराई दे जाए

सगा नहीं है न सौतेला भाई राखी पर
बहन उदास है कोई कलाई दे जाए

वो सच को झूठ में बदलेगा कब तलक आख़िर
अभी भी वक्त है आकर सफाई दे जाए

क़फ़स में कैद हूँ यादों की आज भी उसके
उसे कहो कि मुझे अब रिहाई दे जाए

रदीफ़-क़ाफ़िया मन में मिलाए बैठा हूँ
ख़याल बनके वो आए रुबाई दे जाए

मैं माँगता हूँ फ़क़त एक ही दुआ रब से
सभी को प्यार, मोहब्बत, भलाई दे जाए

अनिल 'मानव'

फिरे हम लोग दुनिया कोः किशन तिवारी भोपाल

फिरे हम लोग दुनिया को ही अपना दर्द दिखलाते
हम अपने आप से बाहर निकल कर क्यूँ नहीं आते

जिसे इक रोज़ सबके सामने आना ये निश्चय है
न जाने किस लिए सच बोलने से लोग घबराते

हमारी और उनकी प्यास में है फ़र्क़ बस इतना
हमें पानी नहीं मिलता लहू वो रोज़ पी जाते

समय के साथ चलना है तो आँखें खोल कर रखिए
हमारे बीच हैं कातिल नज़र हमको नहीं आते

कई सदियों का हमको है तजुर्बा जाग भी जाओ
कभी गुज़रे हुए लम्हे नहीं फिर लौट कर आते

सभी के हाथ को थामे जब अपनी राह चल देंगे
जमीं से चाँद तारों तक हम तिरंगा अपना फहराते

किशन तिवारी भोपाल

कागज़ी पहने हुएः विजय वाजिद

दूर तक मंज़र हैं सारे तीरगी पहने हुए
सिर्फ़ हम ही जल रहे हैं रौशनी पहने हुए

बारिशों में भीग जाने का ख़सारा उनसे पूछ
जिस्म पर जो पैराहन हैं कागज़ी पहने हुए

क्या कहूं यूं दर ब दर फिरना मुकद्दर है मेरा
पांव जब से हैं मेरे आवारगी पहने हुए

फिर रहे हैं लोग इतराते हुए इस ख़ाक पर
जिस्म पर पोशाक अपने ख़ाक की पहने हुए

रंग जब उतरेगा हो जायेगा सब कुछ बेनकाब
मौत भी है चार दिन की ज़िंदगी पहने हुए

रूह दोनों की मुसलसल रक्स करती है "विजय"
इश्क राधा और मीरा बंदगी पहने हुए

विजय वाजिद

इक कली की तरहः मोहन सिंह तन्हा

देखने में तो है आदमी की तरह
पर महकता है वो इक कली की तरह

ये अंधेरे उसे अब डराते नहीं
जगमगाता है वो रोशनी की तरह

आईने की तरह उसका है साफ दिल
उसका हर लफ्ज़ है बंदगी की तरह

मुझसे जब वह मिला मेरा ही हो गया
लगता ही वो नहीं अजनबी की तरह

प्यार उससे मुझे कुछ हुआ इस कदर
जैसे सांसों में हो ज़िंदगी की तरह

मुस्कुराए तो जैसे खिलें फूल सब
धड़कनों में बसा आशिकी की तरह

'तन्हा' चेहरा है उसका भरा नूर से
सच बताऊं तो है आप ही की तरह।

मोहन सिंह तन्हा

बगावत लिखी हैः पूनम सिंह

कलम ने मेरी फिर हिमाकत लिखी है,
छाई हर तरफ वो बगावत लिखी है ।।

नफरत के शजर हैं लगे हर तरफ,
उठ रही आंधी की कयामत लिखी है ।।

खिले थे बाग हर तरफ लहलहाते,
जाने किसने गुलशन की आफत लिखी है।।

अहम की हर तरफ है होड़ लगी,
उजड़ा आशियाना कैसी मुसीबत लिखी है।।

छोटी सी जिंदगी है कब है उस पार जाना,
फिर क्यों इतनी नजाकत लिखी है।।

कर लो रहम है खुदा की गुजारिश,
जिंदगी को क्यों इतनी शामत लिखी है।।

मोहब्बत का है मुल्क 'पूनम' यहीं तेरा ठिकाना,
मुहब्बत में गुजारो यही वसीयत लिखी है।।

-पूनम सिंह, नोएडा, उत्तर प्रदेश।

हार कैसे मान लें हमः डा.रमेश कटारिया

नफरती तेवर तुम्हारे हार कैसे मान लें हम।
ठीक से पहले तुम्हे हम जान लें पहचान लें हम।

नफरतें करते रहे और प्यार जतलाते रहे।
उसी थाली में छेद किया जिसमें तुम खाते रहे।
इन तुम्हारी हरकतों को मनुहार कैसे मान लें हम।

कितना समझाया तुम्हें था साम, दाम, दण्ड, भेद से।
तुम नहीं माने हमें है बस यही इक खेद थे।
हक हमारा है तेरा अधिकार कैसे मान लें हम

पद दलित क्यों हो गए हो आज अपने धर्म से।
और कोई होता तो मर ही जाता शर्म से।
फिर बताओ आपको सरदार कैसे मान लें हम।

ये तुम्हारी कर्कश वाणी दिल में चुभती तीर सी।
देख कर निर्लज्जताएं दिल में उठती पीर सी।
कांव कांव को तेरी मल्हार कैसे मान लें हम।
हम ने जब भी जो कहा तो आप क्यों पुलकित हुए।
हमको खांसी भी आई तो आप क्यों विचलित हुए।
चापलूसी को तेरी सत्कार कैसे मान लें हम।

डा.रमेश कटारिया पारस ग्वालियर मध्य प्रदेश

एक चंदा हैः बबिता प्रजापति

एक चंदा है
उसको घेरे तारे हैं
कुछ चंदा संग चमक रहे
कुछ दूर बेचारे हैं।
वे छोटे प्यारे शिशु
छत पे लेटे सोच रहे
इस चंदा पे ये बूढ़ी दादी
जाने किसके सहारे है।
छोटे छोटे भाई बहन
तारों की हलचल देख रहे
एक सरकता दूजा सरकता
पर चुप वे डर के मारे हैं।
दिनभर की हारी थकी माँ
आकाश को अपलक निहार रही
शीतल शांत गगन में
मिट गए दर्द सारे हैं।

बबिता प्रजापति झांसी

वैशाखी का दिनः जगदीश कौर

गुरु गोबिंद ने वैशाखी वाले दिन को चुना।
लेने को इम्तिहान ताना-बाना था बुना।।
यह दिन खुशी का सबके लिए भारी था।
किसान भी फसल काटने की तैयारी को था।।
सिकखी में धर्म, जाँत का भेदभाव न था।
किसी के लिए नफरत, अलगाव भी न था।।

हिंदू धर्म के लिए भी यह दिन विशेष है।
गुरु का आज सच का करना उन्मेश है।
बुलाई गुरु ने एक सभा बडी भारी।
पाँच शीश लेने की की है मैने तैयारी।
आज खालस धर्म का इम्तिहान है।
तुम्हारी इंसान होने की पहचान है।
शीश देकर अपना खालसे में प्रवेश करों।
आकालपुरख के सामने जीवन का निवेश करों।
तुम्हारे जन्म का लक्ष्य तुम्हारे है सामने ।
खडा खुद परमात्मा तुम्हारा हाथ है थामने।
सबके होश उड गए मौत के डर से।
दया राम उठे जान हथेली में रखके।
एक-एक करके उठ खडे हुए पाँच वीर।
सहज ,सिदक, गंभीर और थे अधीर।
गुरु ने आज नानक के खालसे को आगे बढाया।
उसी सिद्धांत, विचार, फलस़फे को दोहराया।
सबको पिलाकर चरण पाहुल सिंह सजाया।
उनके नाम के आगे कौर-सिंह था सजाया।
नानक ने खालस धर्म था जो चलाया।
दसवे जामें में फिर उसे दृढ़ करवाया।।
हम सब एक अकालपुरख की संतान है।
सच धर्म के लिए मर मिटना ही शान है।
गोबिंद ने तो इसके लिए वारा परिवार सारा।
हम सबको अपना पुत्र कहकर स्वीकारा।।
हिंदुस्तान आज है ,हमेशा अमर रहेगा।
सरहंद, चमकौर का इतिहास यह गवाही भरेगा।।

जगदीश कौर
प्रयागराज इलाहाबाद यूपी